IGKV/Pub./2024/T.bl./07

दलहन की उन्नत तकनीक

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय
कृषक नगर, रायपुर 492 012 (छ.ग.) भारत

प्रेरणास्रोत

डॉ. गिरीश चंदेल
माननीय कुलपति
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

मार्गदर्शन

डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी
संचालक अनुसंधान सेवायें, इं.गां.कृ.वि., रायपुर

सहयोगीगण

डॉ. दीपक कुमार चन्द्राकर (प्रमुख वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान)
डॉ. मंगला पारीख (वैज्ञानिक, अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन)
डॉ. डी.पी. पटेल (वैज्ञानिक, पौध रोग)
डॉ. के. तांडेकर (वैज्ञानिक, अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन)
डॉ. विकास सिंह (प्रमुख वैज्ञानिक, कीट विज्ञान)
डॉ. मयूरी साहू (वैज्ञानिक, अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन)

संपादन एवं मुद्रण :

डॉ. एच.सी. नन्दा, प्रभारी (तकनीकी प्रकोष्ठ)
डॉ. आर.आर. सक्सेना, सह संचालक अनुसंधान
डॉ. पी.के. जोशी, सह संचालक अनुसंधान
डॉ. धनंजय शर्मा, सह संचालक अनुसंधान
विश्वविद्यालय तकनीकी प्रकोष्ठ
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

प्रथम संस्करण वर्ष : 2024

प्रतियों की संख्या : 500

दलहन की उन्नत तकनीक

आलेख एवं संपादन

डॉ. दीपक कुमार चन्द्राकर, डॉ. मंगला पारीख
डॉ. डी.पी. पटेल, डॉ. के. तांडेकर
डॉ. विकास सिंह, डॉ. मयूरी साहू

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय
कृषक नगर, रायपुर - 492 012 (छ.ग.) भारत

Prof. (Dr.) Girish Chandel
डॉ. गिरीश चंदेल
Vice-Chancellor
कुलपति

INDIRA GANDHI KRISHI VISHWAVIDYALAYA
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय
Krishak Nagar, Raipur - 492012
कृषक नगर, रायपुर - 492012
Chhattisgarh, INDIA
छत्तीसगढ़, भारत

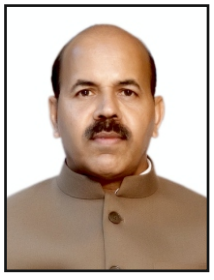

No. PA/VC/188/2024/522
Date : 04/10/2024

प्राक्कथन

दलहनी फसलें देश की पोषण सुरक्षा एवं भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करती है। ये दालें प्रोटीन एवं आवश्यक अमीनों एसिड का संतुलित एवं महत्वपूर्ण स्रोत है। दालों के कृषित क्षेत्रफल उत्पादन एवं उपभोग में भारत का प्रथम स्थान है। विश्व के कुल उत्पादन का 25 प्रतिशत तथा कुल उपभोग का 27 प्रतिशत भारत में होता है अपितु भारत कुल आवश्यकता का लगभग 14 प्रतिशत दाल प्रति वर्ष आयात करता है। छत्तीसगढ़ में कुल अनुमानित 6.26 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में दलहनी फसलें ली जाती है जिसकी औसत उत्पादकता 759 कि.ग्रा./हेक्टेयर राष्ट्रीय औसत उत्पादकता 666 कि.ग्रा./हेक्टेयर है। उन्नत कृषि तकनीकों के समुचित प्रयोग से दलहनों की औसत उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। उत्पादन बढ़ाने के लिए उन्नत प्रजातियों का चयन, उपयुक्त समय पर बुवाई बीजों का उपचार खरपतवार नियंत्रण और रोग रोधी नवन प्रजातियों का चयन आवश्यक है।

उपर्युक्त परिपेक्ष्य में इंदिरा गाधी कृषि विश्वविद्यालय से मूंग, उड़द, अरहर, मटर, तिवड़ा और बरबट्टी आदि दलहनी फसलों के उन्नत किस्में विकसित की गई है जो उच्च उत्पादन क्षमता एवं अपने विशेष गुणों के कारण छत्तीसगढ़ के साथ ही अन्य राज्यों में भी कृषकों द्वारा बोया जा रहा है। इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय से दलहनी फसलों की लगभग 25 उन्नत किस्में विकसित की गई है।

इस तकनीकी पुस्तिका में विश्वविद्यालय द्वारा विभिन्न दलहनी फसलों के विकसित उन्नत किस्मों की तकनीकी जानकारियां एवं किस्मों के विशेषताएं सकलित की गई है जो कृषकों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं तथा विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पुस्तिका के लेखकों को मेरी बहुत–बहुत शुभकामनाएं।

(गिरीश चंदेल)

DIRECTORATE OF RESEARCH SERVICES

संचालनालय अनुसंधान सेवायें

INDIRA GANDHI KRISHI VISHWAVIDYALAYA, RAIPUR - 492012 (C.G.)

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर - 492012 (छ.ग.)

डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी
संचालक अनुसंधान सेवायें
Dr. Vivek Kumar Tripathi
Director Research

S.No. 1845

Date : 14.10.2024

प्रस्तावना

भारत में दलहनी फसलों का क्षेत्रफल सबसे अधिक है तथा भारत विश्व का प्रमुख दलहन उत्पादक देश है और विश्व के कुल दलहन उत्पादन का लगभग 25 प्रतिशत से भी अधिक भारत में होता है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में लगभग 7,52,320 हेक्टेयर क्षेत्रफल में दलहनी फसलें ली जाती है। दलहनी फसलें प्रोटीन के प्रमुख स्त्रोत के साथ ही टिकाऊ खेती एवं फसल विविधिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। पिछले कुछ वर्शों में दलहनों की उन्नतशील एवं रोगरोधी किस्मों एवं उनके उत्पादन तकनीकों के विकास के फलस्वरूप दलहनी फसलों की उत्पादकता में काफी वृद्धि देखने को मिली है। परन्तु फिर भी यह वृद्धि विश्व के औसत उत्पादकता से काफी कम है। दलहनी फसलों पर अनुसंधानों एवं कृषकों के खेतों पर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों से यह स्पष्ट विदित होता है कि उन्नत उत्पादन प्रौद्योगिकी एवं उल्लतशील किस्मों के प्रयोग से दलहनों के उत्पादन में 30–35 प्रतिशत तक की वृद्धि संभव है। अतः यह अति आवश्यक है कृषकों को दलहनों की उन्नतशील विकसित प्रजातियों, सस्य क्रियाओं और कीटों एवं रोगों के रोकथाम के बारे में भरपूर जानकारी से अवगत कराया जाए। इस तकनीकी पुस्तिका में विश्वविद्यालय से विकसित विभिन्न दलहनी फसलों की उन्नत किस्मों की महत्वपूर्ण जानकारी संकलित है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह तकनीकी पुस्तिका दलहन उत्पादन से जुड़े प्रसार कार्यकर्ताओं, किसानों एवं विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। इस प्रकार कृषि वैज्ञानिकों एवं केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा किए जा रहे विशेष प्रयास आने वाले समय में दलहन उत्पादन में देश को आत्मनिर्भरता प्रदान करेंगे, जिससे खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ पोषण सुरक्षा भी सुनिश्चित हो सकेंगी।

मैं पुस्तिका के लेखकगणों को बधाई देता हूँ।

(विवेक कुमार त्रिपाठी)

अनुक्रमणिका

क्र.	विवरण	पृष्ठ
1.	मटर	1–8
2.	तिवड़ा	9–15
3.	कुल्थी	16–22
4.	लोबिया	23–28
5.	मुंग	29–36
6.	उड़द	37–43
7.	मसूर	44–50

मूंग

वानस्पतिक नाम	-	विग्ना रेडियेटा	कुल	-	लेग्युमिनोसी
उपकुल	-	पैपिलिओनेसी	क्रोमोसोम न.	-	22
स्थानीय नाम	-	मूंग			

भारत का लोकप्रिय दालों में मूंग का महत्वपूर्ण स्थान है। मूंग के दाने में 25 प्रतिशत प्रोटीन, 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट व 1.3 प्रतिशत वसा पाई जाती है। दैनिक भोजन में मूंग की दाल का प्रयोग कवेल सामान्य लोगों के लिए ही नहीं बल्कि रोगियों के लिए विशेष उपयोगी माना जाता है। अंकुरित मूंग में विटामिन सी, राइबोफ्लेविन एवं थाइमिन अधिक मात्रा में पायी जाती है। पशुओं के लिए हरे चारे के रूप में तथा खेतों में हरी खाद के रूप में भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसका भूसा अधिक पौष्टिक एवं स्वादिष्ट होता है।

छत्तीसगढ़ में मूंग की खेती मुख्य रूप से महासमुंद, राजनांदगांव, रायगढ़, गरियाबंद, कांकेर, सुकमा इत्यादि जिलों में सफलतापूर्वक की जाती है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में इसकी खेती लगभग 44.2 हजार हेक्टेयर में की जाती है। जिसका उत्पादन 17.33 हजार मीट्रिक टन है और औसत पैदावार 392 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है जो कि राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। भारत में मूंग का रकबा 5.5 मि.हे., उत्पादन 3.68 मि.टन एवं उपज 663 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

मूंग की फसल सभी मौसमों में की जा सकती है। बीज अंकुरण के लिए कम से कम 15^{0} सेल्सियस तापमान आवश्यक है। फसल बढ़वार एवं वृद्धि के लिए 20^{0}–40^{0} सेल्सियस (आदर्श) तापक्रम की आवश्यकता होती है। ऐसे क्षेत्र जहाँ पर 60–75 से.मी. तक वार्षिक वर्षा होती है, मूंग की खेती के लिए उपयुक्त होती है। फल्लियॉ बनते समय तथा फसल पकते समय शुष्क मौसम एवं उच्च तापमान अधिक लाभप्रद पाया गया है। यह एक अल्प प्रकाशपेक्षी पौधा है, जिसकी वृद्धि एवं विकास के लिए 12–13 घण्टे के प्रकाशावधि चाहिए जिसके बढ़ने से पुष्पावस्था आगे बढ़ जाती है।

भूमि का चयन :

मृदा : मूंग की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली गहरी दोमट तथा जलोढ़ भूमि तथा दक्षिण भारत की लाल और काली मिट्टी में की जाती है। दोमट से बलुई दोमट भूमि मूंग की खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। साथ ही अच्छे जल–निकास वाली भारी मृदाओं में भी इसकी खेती की जा सकती है।

भूमि की तैयारी : मानसून प्रारंभ होते ही 2–3 जुताईयां देशी हल या कल्टीवेटर से की जाती है और पाटा चलाकर खेत को समतल कर लेना चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए रबी की फसल काटने के पश्चात् पलेवा देकर खेत तैयार करते हैं। दीमक कीट के प्रकोप से फसल के बचाव हेतु इंडोसल्फान चूर्ण 4 प्रतिशत या क्लोरपाइरीफास चूर्ण 1.5 प्रतिशत 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के हिसाब से मिट्टी में मिलाना चाहिए। जल–निकास के लिए प्रत्येक 5 मीटर के अंतराल से खेत में नालियॉ बनाई जाती है।

बुवाई का समय : मूंग का बुवाई का समय मानसून भूमि के प्रकार एवं बोई जाने वाली किस्म पर निर्भर करता

है। वर्षा ऋतु की फसल को मध्य जुलाई से अगस्त के दूसरे सप्ताह तक बोना चाहिए। बसंतकालीन फसल फरवरी के द्वितीय पखवाड़े या मार्च में बोना चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल को रबी फसल काटने के तुरन्त बाद बो देना चाहिए। छत्तीसगढ़ की भाठा एवं हल्की भूमि में जल्दी पकने वाली किस्में जुलाई के दूसरे पखवाडे तक बोई जा सकती है। देर से पकने वाली जातियॉ को कन्हार मिट्टी में मानसून के प्रारंभ में बोना चाहिए। ग्रीष्म में मूंग की बोवाई फरवरी – मार्च में की जा सकती है।

बीज की मात्रा : खरीफ में कतार विधि से बोने के लिए 18–20 कि.ग्रा. तथा छिटकवॉ विधि में 20–25 कि. ग्रा. बीज एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है। अनुसंधान के निष्कर्ष के आधार पर अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु एक हेक्टेयर क्षेत्र पर लगभग 3,33,333 पौध संख्या होने चाहिए अर्थात् एक वर्गमीटर क्षेत्र पर 33–35 पौधे उपयुक्त पाए गए हैं। बसंत एवं ग्रीष्मकालीन बोआई के लिए 20–22 कि.ग्रा. तथा मिश्रित फसल के लिए 5–7 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार :

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेंडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अधिक होता है, उन खेतों में 20 ई.सी. क्लोरोपाइरीफास का 0.2 प्रतिशत घोल से बीज को उपचारित करके बोना लाभप्रद होता है।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार :

एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी से उपचारित न करें।

(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :

बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था	अवधि (दिन)	उपज (क्विं./हे.)	विशिष्ट लक्षण	प्रतिरोधकता
1	आईपीएम 410–3 (शिखा)	2016	आईआईपीआर, कानपुर	65–70	11–12	ग्रीष्म बोनी हेतु उपयुक्त	पीला मोजेक विरोधी
2	पैरी मूग	2010	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	65–70	10–11	छत्तीसगढ़ में रबी के लिए उपयुक्त	पीला मोजेक सहनशील तथा भभूतिया रोग निरोधक
3	पीकेवी एकेएम 4	2009	पीडीकेवी, अकोला	62–66	10.0	खरीफ के लिए उपयुक्त	पीला मोजेक विरोधी

4	हम–16	2006	बीएचयू, वाराणसी	55–58	10.9	ग्रीष्म बोनी हेतु उपयुक्त	पीला मोजेक प्रतिरोधी
5	हम–12	2003	बीएचयू, वाराणसी	60–62	11.2	ग्रीष्म बोनी हेतु उपयुक्त	पीला मोजेक मध्यम प्रतिरोधी
7	हम–1 (मालवीय ज्योति)	1999	बीएचयू, वाराणसी	65–70	10–12	चमकीला हरा दाना	पीला मोजेक विरोधी
8	प्रज्ञा	1999	इं.गां.—.वि.वि., रायपुर	90–100	9.0	दाना गहरा हरा काला रबी के लिए उपयुक्त/ उतेरा छत्तीसगढ़ में	पीला मोजेक, भभूतिया रोग सहनशील, निरोधी एवं ज्पच इसपहीज निरोधी
7	बीएम 4	1992	एआरएस, बदनापुर	65–70	10–12	–	पीला मोजेक एवं भभूतिया रोग सहन ील
8	पीडीएम 11	1987	आईआईपीआर, कानपुर	75	8.33	बीज चमकिला, हरा, बड़ा द्ध3.2 ग्राम/ 100 दानाऋ	पीला मोजेक
9	पूसा 105	1987	आईएआरआई, न्यू दिल्ली	75	10.0	–	पीला मोजेक एवं भभूतिया रोग सहन ील

प्रज्ञा

पैरी मूंग

बोने की विधि: मूंग को छिटकवॉ तथा कतार विधि से बोया जाता है। अधिक उपज के लिए हल के पीछे पंक्तियों में बोआई करना उपयुक्त रहता है। खरीफ फसल के लिए पंक्तियों के मध्य की दूरी 30 से.मी. तथा बसन्त व ग्रीष्मकालीन फसलों के लिए पंक्तियों की दूरी 20–25 से.मी. रखी जाती है। बीजों की आपसी दूरी 8–10 से.मी. रखते हुए 4 से.मी. गहराई पर बोना चाहिए। जल भराव वाले खेतों में मूंग को 10–12 से.मी. ऊंची ढाल के विपरीत मेडों पर बोने से फसल पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन मूंग एक दलहनी फसल है। अतः इसे नत्रजन धारी उर्वरकों की अधिक आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु अच्छी उपज लेने के लिए संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक रहता है। खेत की अंतिम जुताई के समय पूर्णतः सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट, पांच टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह मिलाये। इसके बाद बीज की बुवाई के समय 20 किलो नत्रजन, 40–50 किला स्फूर, 20–25 किलो पोटाश तथा 20 किलो सल्फर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से कूँडों में 5–7 से.मी. गहराई पर बीज के बगल में डालना चाहिए। अनुसंधानों के निष्कर्ष में पाया गया है कि मूंग की उचित बढ़वार एवं विपुल उत्पादन हेतु 1 प्रतिशत एन.पी.के. 19:19:19 का पर्णीय छिड़काव दो बार (प्रथम फुल आने के पहले तथा द्वितीय फलीयाँ बनने पर) करना चाहिए। उर्वरकों की सही मात्रा का निर्धारण मृदा परीक्षण आधार पर करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण: फसल एवं खरपतवार की प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवधि बुआई के 15–30 दिनों तक रहती है। इसलिए प्रथम निंदाई, बोआई के 20–25 दिनों के अंदर तथा दूसरी निंदाई आवश्यकतानुसार फूल–फल की अवस्था में करनी चाहिए। अनुसंधानों से यह पाया गया है कि निंदा नियंत्रण समय पर न करने से फसल की उपज में 25–50 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है। रासायनिक खरपतवार प्रबंधन हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग कर खरपतवार प्रबंधन करना चाहिए। खरपतवारनाशियों का खेत में छिड़काव करने हेतु हमेशा फ्लैट फैन नोजल युक्त पम्प से 500–600 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से घोल बनाकर प्रयोग करना उचित रहता है।

मूंग में रासायनिक खरपतवार प्रबंधन:

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	इमेजाथापायर 10: एस. एल	30	300	खरपतवार की 2–3 पत्ती की अवस्था में	ये संकरी पत्ती वाले सांवा एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5: ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई. सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास: वर्षाकालीन फसल में प्रायः सिंचाई की आवश्यकता नही पड़ती है परन्तु अधिक वर्षा की स्थिति में खेत में भरे जल का निकास नितांत आवश्यक है। सूखे की स्थिति में फल्लियां बनते समय एक सिंचाई देना लाभकारी पाया गया है। मूंग को अपने जीवन काल में 15–30 से.मी. जल की आवश्यकता होती है। ग्रीष्मकालीन फसल में अंकुरण हेतु भूमि में पर्याप्त नमी रहनी चाहिए। इसके बाद 10–12 दिन के अन्तर से 3 बार सिंचाई करना आवश्यक है। पहली सिंचाई बुवाई से फूल आने के पहले (बोने के 20–25 दिन में), द्वितीय सिंचाई फूल बनते समय (बोने के 25–40 दिन) और तृतीय सिंचाई फल्ली में दाना भरते समय करना चाहिए।

फसल पद्धति: मूंग की मिश्रित खेती मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ना आदि फसलों के साथ की जाती है। फरवरी–मार्च में गन्ने की फसल बोने पर कम तापक्रम के कारण गन्ने की वृद्धि कम होती है। अतः इस समय मूंग की फसल गन्ने के साथ आसानी से ली जा सकती है। उत्तरी भारत में अपनाये जाने वाले प्रमुख प्रचलित फसल चक्रः मक्का–आलू–मूंग, मक्का–गेहूं–मूंग, धान–गेहूँ–मूंग, मूंग–मक्का , तोरिया–आलू आदि है।

पौध संरक्षण:

रोग व्याधि प्रबंधन:

चूर्णिल आसिता या भभूतिया (पाऊडरी मिल्डू):

यह कवक जनित रोग मूंग उगाये जाने वाले सभी क्षेत्रों में पाया जाता है तथा इसका प्रकोप रबी मौसम की फसल पर सबसे अधिक होता है।

सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद रंग के छोटे–छोटे चकते बनते है जो बाद में बड़े होकर एक–दूसरे से मिल जाते हैं व पूरी पत्ती को ढंक लेते हैं। रोग की उग्र अवस्था में संक्रमित पौधे की पत्तियां पूर्णतः सूख जाती है, फलस्वरूप फल्लियाँ कम बनती हैं तथा बनी हुई फल्लियों में दाने छोटे तथा सिकुड़े हुए बनते है।

इस रोग को रोगजनक इरीसाइफी पीसी/पालीगोनी फफूँद है।

प्रबंधन:

खेत में पड़े रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को कटाई उपरान्त एकत्र कर जला देना चाहिए। बुवाई के लिए बीजों का चयन रोगमुक्त क्षेत्र की फसल से करना चाहिए तथा सदैव प्रमाणित बीजों की ही बुवाई करनी चाहिए। जल्दी पकने वाली किस्मों तथा अपेक्षाकृत जल्दी बोई गई फसल पर इस रोग का संक्रमण कम होता है। खेत में रोगग्रस्त फसल पर गंधक चूर्ण (200 मेश) 25–30 कि.ग्रा./हेक्टेयर का भुरकाव करना चाहिए। छिड़काव हेतु घुलनशील गंधक (3 ग्राम) का उपयोग प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा 12–15 दिन के अंतराल पर दोहराना चाहिए। रोगरोधी/सहनशील किस्में उगाना चाहिए।

पीला चितकबरापन या मोजेक (यलो मोजेक):

फसल की प्रारंभिक अवस्था में इस रोग के प्राथमिक लक्षण सबसे ऊपरी पत्ती पर पीले हरे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। ग्रसित पौधों की बढ़वार प्रायः रूक जाती है। अंकुरण के 5–6 सप्ताह बाद द्वितीयक संक्रमण से ग्रसित पौधे दिखाई देते हैं। पत्तियों पर अनियमित आकार के हल्के पीले रंग के चकते दिखाई देते हैं जो

एक साथ मिलकर तेजी से फैलते हैं जिससे पत्तियों पर पीले धब्बे हरे धब्बों के अगल–बगल दिखाई देते हैं। संक्रमित पत्तियाँ धीरे–धीरे पीली होकर अन्त में ऊतकक्षयी हो जाती हैं। यह रोग एक विषाणु जनित रोग है जिसका वाहक सफेद मक्खी (बेमेसिया टेबेसाई) है।

प्रबंधन:

जहां तक संभव हो, खेत के चारों तरफ तथा खेत की साफ–सफाई रखना चाहिए, जिससे रोगजनक विषाणु के अन्य परपोषी न पनप पायें। जब रोग के प्रारंभिक लक्षण छोटे पौधों पर दिखाई दे तब उन्हें उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। पौधों को सफेद मक्खी के आक्रमण से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मि.ली./ली.) कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए। रोग प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों को उगाना चाहिए।

कीट प्रबंधन : कीट प्रबंधन की चलित तकनीक

रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रित करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. **फसल चक्र एवं किस्म चयन:** उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।
2. **फसल बंधन:** भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।
3. **निगरानी:** फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।
4. **मित्र जीव संवर्धन:** कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।
5. **रासायनिक कीट नियंत्रण:** दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

हानिकारक कीटों की पहचान:

चित्तीदार फली भेदक कीट: इस कीट की इल्लियां पत्ती, कलिका एवं फलियों को जाले से बांधकर तथा उसके अंदर रहकर नुकसान पहुंचाती है। इसे नष्ट करने के लिए क्लोरट्रानिप्रोल 18.50 प्रतिशत एस.सी. 100 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

चने की इल्ली: इसकी इल्लियां प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है तथा बाद की अवस्था में फल्ली में गोलाकार छेद बनाकर अपना सिर फली में घुसाकर दाने को खाती है। इसे नष्ट करने के लिए फेनवलरेट 20 प्रतिशत ई.सी. 500 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

थ्रिप्स: इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु पत्तियों एवं फल्लियों से रस चूसते है जिससे क्षतिग्रस्त भाग पर सफेद धारियां पड़ जाती है।

समन्वित कीट प्रबंधन:

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें तथा फसल के अवशेष नष्ट करें। समय पर बुवाई करें। इससे कीटों से क्षति कम होती है। प्रकाश प्रपंच (1–2 प्रति हेक्टेयर) एवं फेरोमोन प्रपंच (12–15 प्रति हेक्टेयर) का उपयोग करें। ग्वारफली एवं अरण्डी को ट्रैप फसल के रूप में लगाएं। कीड़ों को फसल पर अण्डा देने से रोकने के लिए फसल की कली अवस्था में एन.एस.के.ई. 5 प्रतिशत का छिड़काव करें।

रासायनिक नियंत्रण: फसल की फूलों वाली अवस्था में 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़ाकाव करें-

प्रोफेनाफास 50 ई.सी. 1.5 ली./हेक्टेयर या इण्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर या फ्लूबेनडायमाइड 480 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर।

थ्रिप्स एवं फल्ली भेदक कीटों के एक साथ प्रकोप होने पर-

इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की मात्रा 250 मि.ली./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं गहाई :

मूंग की फसल पकने पर फल्लियां काले रंग की हो जाती हैं। इस समय कटाई कर लेना चाहिए। बसंत एवं ग्रीष्मकालीन मूंग में जब लगभग 50 प्रतिशत फल्लियां पक जाये तो इनकी पहली तुडाई करनी चाहिए। फल्लियां के पकने पर पुनः तुडाई करनी चाहिए। फल्लियों को सूखी अवस्था में अधिक समय तक छोडने से वे चटख जाती हैं और दाने बिखर जाते हैं जिससे उपज घट जाती है। फल्लियों से बीज को दॉय चलाकर अलग कर साफ कर लेते हैं। गहाई करने के बाद दानो को अच्छी तरह सुखाएं।

उपज एवं भण्डारण:

उन्नत सस्य विधि अपनाकर वर्षाकालीन फसल से 10–12 तथा ग्रीष्मकालीन फसल से 12–15 क्विं./हेक्टेयर तक दाने की उपज प्राप्त हो जाती है। साथ ही लगभग 15–20 क्विं/हे. सूखा भूसा भी प्राप्त हो जाता है। अच्छी तरह सूखाने के बाद जब बीज में नमी का अंश 12–13 प्रतिशत रह जाए तब नमी रहित स्थान में भण्डारित करना चाहिए।

मूंग के उत्पादन के मंत्र:

खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्मों का उपयोग करना चाहिए।

हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें। सही समय में कटाई करना चाहिए। भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए ।

आर्थिक विश्लेषण:

उन्नत विधि को अपनाकर मूंग की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 20000–25000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ रू. 40000–45000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। मूंग की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

***

उड़द

वानस्पतिक नाम	-	**विग्ना मुंगो**	**क्रोमोसोम न.**	-	**(2 एन =22, X = 11)**
कुल	-	**लेग्युमिनेसी**	**स्थानीय नाम**	-	**उरदा, उर्द**
उपकुल	-	**पैपिलिओनेसी**			

खरीफ के मौसम में ली जाने वाली दलहन फसलों में उर्द (उड़द) महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उडद के दाने का प्रयोग मुख्य रूप से दाल के रूप में किया जाता है। इसके दाने में 23–24 प्रतिशत प्रोटीन, 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट व 1.3 प्रतिशत वसा पायी जाती है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ो में गांठे पायी जाती है जो कि वायुमंडलीय नत्रजन का संस्थापन करती है।

छत्तीसगढ़ में उड़द की खेती मुख्य रूप से जशपुर, कोंडागांव, सरगुजा, महासमुंद, कांकेर, रायगढ़ व सुरजपुर इत्यादि जिलों में सफलतापूर्वक की जाती है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में इसकी खेती लगभग 146.01 हजार हेक्टेयर में की जाती है। जिसका उत्पादन 51.47 हजार मीट्रिक टन है और औसत पैदावार 352.5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है जो कि राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। भारत में उड़द का रकबा 4 मि.हे., उत्पादन 2.63 मि.टन एवं उपज 657 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

जलवायु : उड़द के लिए नम एवं गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। उड़द फसल की समुचित बढ़वार के लिए 25^{0} सेल्सियस–30^{0} सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है। उड़द की खेती के लिए 75–90 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र उपयुक्त होते है। पुष्पावस्था के समय अधिक वर्षा इसकी उपज को कम करती है।

भूमि का चयन:

मृदा : लाल दोमट, हल्की लाल, कपास की काली मिट्टी एवं भारी जलोढ़ मिट्टियों में इसकी खेती की जाती है। छत्तीसगढ़ की मटासी दोमट या डोरसा भूमि इसकी खेती हेतु उपयुक्त है। पहाड़ी क्षेत्रों में उड़द की खेती बलुई डोरसा एवं मैदानी क्षेत्र में मटासी भाटा भूमि में की जाती है। उड़द के लिए अम्लीय एवं क्षारीय भूमि उपयुक्त नही हैं।

भूमि की तैयारी : वर्षा प्रारंभ होते ही 2–3 बार खेत की हल्की जुताई कर खरपतवार साफ करना चाहिए। जुताई के पश्चात् पाटा चलाकर खेत समतल कर लेना चाहिए। दीमक से बचाव के लिए क्लोरपायरीफास 1.5 प्रतिशत चूर्ण 20 किलो प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिलाना चाहिए।

बुवाई का समय : उड़द की बुआई खरीफ में जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक की जाती है। बसंत कालीन उड़द फरवरी –मार्च तथा ग्रीष्म कालीन फसल को अप्रैल के दूसरे सप्ताह में बो देना चाहिए।

बीज की मात्रा : खरीफ में कतार विधि से बोने के लिए 18–20 कि.ग्रा. तथा छिटकवां विधि में 20–25 कि.ग्रा. बीज एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है। बसंत एवं ग्रीष्मकालीन बुवाई के लिए 20–22 कि.ग्रा. तथा मिश्रित फसल के लिए 5–7 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार :

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेंडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अधिक होता है, उन खेतों में 20 ई.सी. क्लोरोपाइरीफास का 0.2 प्रतिशत घोल से बीज को उपचारित करके बोना लाभप्रद होता है।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार :

एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि. ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी से उपचारित न करें। पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड. एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था	अवधि (दिन)	उपज (क्विं./हे.)	विशिष्ट लक्षण	प्रतिरोधकता
1	इंदिरा उड़द प्रथम	2015	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	70–75	12.0	खरीफ रेनफेड एवं ग्रीष्म मौसम में सिंचित के लिए उपयुक्त	पीला मोजेक एवं भभूतिया रोग फल्ली बनने तक निरोधक
2	एनयूएल 7	2009	निर्मल सीड	70	11.0	खरीफ के लिए उपयुक्त	पीला मोजेक एवं भभूतिया रोग निरोधक
3	केयू 96–3 (आजाद उड़द– 3)	2003	सीएसएयूएटी, कानपुर	73	8.0	खरीफ के लिए उपयुक्त	पीला मोजेक निरोधी
4	आरबीयू– 38 (बरखा)	1999	आरएयू, बाँसवाड़ा	75	12.5	बड़ा दाना	पीला मोजेक सहनशील
5	टीपीयू– 4	1992	बीएआरसी, ट्राम्बे	74	7.13	4.3 ग्राम/ 100 दाना	पीला मोजेक सहनशील
6	पीडीयू 1 (बसंत बहार)	1991	आईआईपीआर, कानपुर	70–80	13.8	सीधा, बड़ा दाना (4.8 ग्राम/ 100 दाना)	पीला मोजेक सहनशील

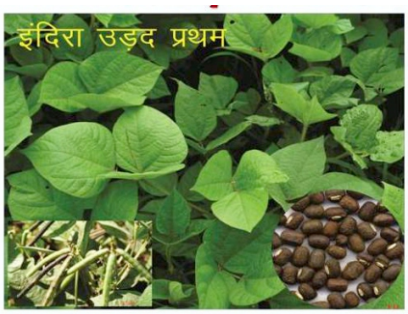

बोने की विधि : उड़द को छिटकवॉ तथा कतार विधि से बोया जाता है। खरीफ फसल के लिए पंक्तियों के मध्य की दूरी 30 से.मी. तथा बसन्त व ग्रीष्मकालीन फसलों के लिए पंक्तियों की दूरी 20–25 से.मी. रखी जाती है। बीजों की आपसी दूरी 8–10 से.मी. रखते हुए 4 से.मी. गहराई पर बोना चाहिए। जल भराव वाले खेतों में उड़द को 10–12 से.मी. ऊंची ढाल के विपरीत मेड़ों पर बोने से फसल पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : अच्छी उपज लेने के लिए संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक रहता है। खेत की अंतिम जुताई के समय पूर्णतः सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट, पॉच टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह मिलाये। इसके बाद बीज की बुवाई के समय 20 किलो नत्रजन, 40–50 किला स्फूर, 20–25 किलो पोटाश तथा 20 किलो सल्फर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से कूडों में 5–7 से.मी. गहराई पर बीज के बगल में डालना चाहिए। अनुसंधानों के निष्कर्ष में पाया गया है कि उड़द की उचित बढ़वार एवं विपुल उत्पादन हेतु 1 प्रतिशत एन.पी.के. 19:19:19 का पर्णीय छिड़काव दो बार (प्रथम फुल आने के पहले तथा द्वितीय फलीयाँ बनने पर) करना चाहिए। उर्वरकों की सही मात्रा का निर्धारण मृदा परीक्षण आधार पर करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : फसल एवं खरपतवार की प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवधि बुआई के 15–30 दिनों तक रहती है। इसलिए प्रथम निंदाई, बोआई के 20–25 दिनों के अंदर तथा दूसरी निंदाई आवश्यकतानुसार फूल–फल की अवस्था में करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार प्रबंधन हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग कर खरपतवार प्रबंधन करना चाहिए। खरपतवारनाशियों का खेत में छिड़काव करने हेतु हमेशा फ्लैट फैन नोजल युक्त पम्प से 500–600 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से घोल बनाकर प्रयोग करना उचित रहता है।

उड़द में रासायनिक खरपतवार प्रबंधन :

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	इमेजाथापायर 10: एस. एल	30	300	खरपतवार की 2–3 पत्ती की अवस्था में	ये संकरी पत्ती वाले सांवा एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5: ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई. सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई. सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास : अधिक वर्षा की स्थिति में खेत में भरे जल का निकास नितांत आवश्यक है। सूखे की स्थिति में फल्लियॉ बनते समय एक सिंचाई देना लाभकारी पाया गया है। उड़द को अपने जीवन काल में 15–30 से.मी. जल की आवश्यकता होती है। ग्रीष्मकालीन फसल में अंकुरण हेतु भूमि में पर्याप्त नमी रहनी चाहिए। इसके बाद 10–12 दिन के अन्तर से 3 बार सिंचाई करना आवश्यक है। पहली सिंचाई बुवाई से फूल आने के पहले (बोने के 20–25 दिन में), द्वितीय सिंचाई फूल बनते समय (बोने के 25–40 दिन) और तृतीय सिंचाई फल्ली में दाना भरते समय करना चाहिए।

फसल पद्धति : उड़द कम अवधि में तैयार होने वाली दलहनी फसल है जिसे फसल चक्र में सम्मिलित करना लाभप्रद रहता है। मक्का –आलू –उड़द (बसंत), ज्वार + उर्द–गेहूँ, धान–गेहूँ–उड़द (ग्रीष्म), अरहर + उड़द–गेहूँ आदि फसल उड़द (अनुशंसित किस्म) की एक या दो कतारे अन्तः फसल के रूप में बोना चाहिए। गन्ने के साथ भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है।

पौध संरक्षण :

रोग व्याधि प्रबंधन :

चूर्णिल आसिता या भभूतिया ;पाऊडरी मिल्ड्यूद्ध :

यह कवक जनित रोग उड़द उगाये जाने वाले सभी क्षेत्रों में पाया जाता है तथा इसका प्रकोप रबी मौसम की फसल पर सबसे अधिक होता है।

सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद रंग के छोटे–छोटे चकते बनते है जो बाद में बड़े होकर एक–दूसरे से मिल जाते हैं व पूरी पत्ती को ढंक लेते हैं। पत्तियों व पौधे के अन्य हरे भागों पर सफेद चूर्ण जमा हो जाता है। रोग की उग्र अवस्था में संक्रमित पौधे की पत्तिया पूर्णतः सूख जाती है, फलस्वरूप फल्लियाँ कम बनती हैं तथा बनी हुई फल्लियों में दाने छोटे तथा सिकुड़े हुए बनते है।

इस रोग को रोगजनक इरीसाइफी पीसी/पालीगोनी फफूँद है।

प्रबंधन :

खेत में पड़े रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को कटाई उपरान्त एकत्र कर जला देना चाहिए। बुवाई के लिए बीजों का चयन रोगमुक्त क्षेत्र की फसल से करना चाहिए तथा सदैव प्रमाणित बीजों की ही बुवाई करनी चाहिए। जल्दी पकने वाली किस्मों तथा अपेक्षाकृत जल्दी बोई गई फसल पर इस रोग का संक्रमण कम होता है। खेत में रोगग्रस्त फसल पर गंधक चूर्ण (200 मेश) 25–30 कि.ग्रा./हेक्टेयर का भुरकाव करना चाहिए। छिड़काव हेतु घुलनशील गंधक (3 ग्राम) का उपयोग प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा 12–15 दिन के अंतराल पर दोहराना चाहिए। रोगरोधी/सहनशील किस्में उगाना चाहिए।

पीला चितकबरापन या मोजेक (यलो मोजेक) :

फसल की प्रारंभिक अवस्था में इस रोग के प्राथमिक लक्षण सबसे ऊपरी पत्ती पर पीले हरे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। अंकुरण के 5–6 सप्ताह बाद द्वितीयक संक्रमण से ग्रसित पौधे दिखाई देते हैं। पत्तियों पर अनियमित आकार के हल्के पीले रंग के चकते दिखाई देते हैं जो एक साथ मिलकर तेजी से फैलते हैं

जिससे पत्तियों पर पीले धब्बे हरे धब्बों के अगल–बगल दिखाई देते हैं। संक्रमित पत्तियाँ धीरे–धीरे पीली होकर अन्त में ऊतकक्षयी हो जाती हैं। यह रोग एक विषाणु जनित रोग है जिसका वाहक सफेद मक्खी (बेमेसिया टेबेसाई) है।

प्रबंधन :

जहां तक संभव हो, खेत के चारों तरफ तथा खेत की साफ–सफाई रखना चाहिए, जिससे रोगजनक विषाणु के अन्य परपोषी न पनप पायें। जब रोग के प्रारंभिक लक्षण छोटे पौधों पर दिखाई दे तब उन्हें उखाड़कर नष्ट करें। पौधों को सफेद मक्खी के आक्रमण से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मि.ली./ली.) कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए। रोग प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों को उगाना चाहिए।

कीट प्रबंधन : कीट प्रबंधन की प्रचलित तकनीक

रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रिम करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. **फसल चक्र एवं किस्म चयन**: उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।

2. **फसल प्रबंधन**: भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।

3. **निगरानी**: फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।

4. **मित्र जीव संवर्धन**: कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।

5. **रासायनिक कीट नियंत्रण**: दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

हानिकारक कीटों की पहचान:

चित्तीदार फली भेदक कीट: इस कीट की इल्लियां पत्ती, कलिका एवं फलियों को जाले से बांधकर तथा उसके अंदर रहकर नुकसान पहुंचाती है। इसे नष्ट करने के लिए क्लोरट्रानिप्रोल 18.50 प्रतिशत एस.सी. 100 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

चने की इल्ली: इसकी इल्लियां प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है तथा बाद की अवस्था में फल्ली में गोलाकार छेद बनाकर अपना सिर फली में घुसाकर दाने को खाती है। इसे नष्ट करने के लिए फेनवलरेट 20 प्रतिशत ई.सी. 500 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

थ्रिप्स: इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु पत्तियों एवं फल्लियों से रस चूसते है जिससे क्षतिग्रस्त भाग पर सफेद धारियां पड़ जाती है।

समन्वित कीट प्रबंधन:

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें तथा फसल के अवशेष नष्ट करें। समय पर बुवाई करें। इससे कीटों क्षति कम होती है। प्रकाश प्रपंच (1–2 प्रति हेक्टेयर) एवं फेरोमोन प्रपंच (12–15 प्रति हेक्टेयर) का उपयोग करें। ग्वारफली एवं अरण्डी को ट्रैप फसल के रूप में लगाएं। कीड़ों को फसल पर अण्डा देने से रोकने के लिए फसल की कली अवस्था में एन.एस.के.ई. 5 प्रतिशत का छिड़काव करें।

रासायनिक नियंत्रण:

फसल की फूलों वाली अवस्था में 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़ाकाव करें – प्रोफेनाफास 50 ई.सी. 1.5 ली./हेक्टेयर या इण्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर या फ्लूबेनडायमाइड 480 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर।

थ्रिप्स एवं फल्ली भेदक कीटों के एक साथ प्रकोप होने पर – इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की मात्रा 250 मि.ली./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं गहाई :

उड़द की फसल 75–90 दिनों (किस्मानुसार) में पक जाती है। फल्लियॉ पक कर काली हो जाने पर कटाई करनी चाहिये। अन्य दलहनी फसलों की तरह अधिक सूखने पर फल्लियॉ चटकने लगती है। पौधों को उखाडकर या हंसिये द्वारा कटाई करने के बाद फसल को खलिहान में लाकर सुखाते है। फिर डंडे से पीट कर या बैलो की दॉय चलाकर दाना अलग कर लेते है।

उपज एवं भंडारण :

उन्नत विधि से खेती करने पर इसकी पैदावार देर से पकने वाली किस्मों से 12–15 क्विं. शीघ्र पकने वाली किस्मों से 10–12 क्विं. तथा मिश्रित फसल से 6–8 क्विं./हे. उपज ली जा सकती है। भण्डारण के समय दानों में नमी की मात्रा 10–12 प्रतिशत रखते है। दानों को अच्छी तरह सुखाकर गोदाम में संग्रहीत करना चाहिए।

उड़द के उत्पादन के मंत्र :

खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्मों का उपयोग करना चाहिए।

हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें।सही समय में कटाई करना चाहिए । भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए ।

आर्थिक विश्लेषण :

उन्नत विधि को अपनाकर उड़द की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 20000–22000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ रू. 40000–42000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। उड़द की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

--xx--

मसूर

वानस्पतिक नाम	-	**लेन्स कुलिनेरिस**	**कुल**	-	**लेग्यूमिनोसी**
उपकुल	-	**पैपिलिओनेसी**	**क्रोमोसोम नं.**	-	**2 एन - 14**
स्थानीय नाम	-	**मसूर**			

उत्पत्ति एवं वितरण : इसका जन्म स्थान दक्षिण –पश्चिमी एशिया से लेकर दक्षिण –पूर्वी यूरोप के बीच मिस्त्र एशिया माइनर, अफगानिस्तान आदि है

भारत में इसकी खेती उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, पंजाब, राजस्थान एवं महाराष्ट्र राज्यों में मसूर की खेती प्रमुख रूप से की जाती है। दक्षिणी भागों में भी इसकी खेती प्रचलित है । भारत में विभिन्न दलहनी फसलों के क्षेत्रफल का लगभग 2.4 प्रतिशत भाग में मसूर की खेती होती है।

छत्तीसगढ़ में मसूर खेती मुख्य रूप से राजनांदगांव, खैरागढ़, गंडई, सरगुजा, कबीरधाम, बलरामपुर इत्यादि जिलों में की जाती है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में इसकी खेती लगभग 32.27 हजार हेक्टेयर में की जाती है। जिसका उत्पादन 12.65 हजार मीट्रिक टन है और औसत पैदावार 392 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है जो कि राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। भारत में मसूर का रकबा 1.64 मि.हे., उत्पादन 1.56 मि.टन एवं उपज 952 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

जलवायु : मसूर समशीतोष्ण जलवायु की फसल है। उष्ण कटिबंधीय व उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में मसूर शरद ऋतु की फसल के रूप में उगाई जाती है। पौधो की वृद्धि के लिए ठण्डी जलवायु अच्छी मानी जाती है। तथा फसल पकने के समय उच्च तापमान की आवश्यकता होती है। मसरू की फसल की वृद्धि के लिए 18–30^{0} सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है। पाले से फसल को अधिक क्षति होती है। जहॉ 80–100 से. मी. तक वार्षिक वर्षा होती है। मसूर की खेती बिना सिंचाई के भी की जा सकती है। अधिक ठंड एवं कोहरा की दशा में इसके फूल एवं फल्ली प्रभावित होते है।

भूमि का चयन :

मृदा : मसूर की खेती के लिए बलुई–दोमट तथा मध्यम दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। छत्तीसगढ़ में डोरसा तथा कन्हार भूमि एवं मध्यप्रदेश की काली मृदाओं में मसूर की खेती की जाती है। अच्छी फसल की पैदावार के लिए मिट्टी का पी.एच. का मान 5.8 –7.5 के बीच होना चाहिए।

भूमि की तैयारी : खरीफ फसल की कटाई के बाद 2–3 आड़ी खडी जुताइयॉ देशी हल या कल्टीवेटर से की जाती है । प्रत्येक जुताई करने के पश्चात् पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी या बारीक और समतल कर लेते है । बुवाई के समय खेत में पर्याप्त मात्रा में नमी रहनी चाहिए।

बुवाई का समय : अधिक उपज प्राप्त करने के लिए अक्टूबर अंतिम सप्ताह से मध्य नवंबर का समय उपयुक्त होता है। देर से बोने पर यदि भूमि में नमी कम हो तो सिंचाई करने के पश्चात् (पलेवा) बोना चाहिए ।

बीज की मात्रा : समय पर बुवाई हेतु उन्नत किस्म का 35–40 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। देरी से बुवाई करने के दशा में 40–45 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर बोना चाहिए।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार :

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अधिक होता है, उन खेतों में 20 ई.सी. क्लोरोपाइरीफास का 0.2 प्रतिशत घोल से बीज को उपचारित करके बोना लाभप्रद होता है।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार :

एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी से उपचारित न करें।

(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था	अवधि (दिन)	उपज (क्विं./हे.)	विशिष्ट लक्षण	प्रतिरोधकता
1	छत्तीसगढ़ मसूर– 1	2020	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	90–95	10–11	बड़ा दाना, दाल रिकवरी 70 प्रतिशत असिंचित/अर्धसिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त	पाउडरी मिलड्यू एवं उकठा रोग निरोधक
2	कोटा मसूर 4 (आरकेएल 58 एफ 3715)	2020	एयू, कोटा	110–115	18–19	समय पर बुवाई की स्थिति हेतु उपयुक्त (10 नवम्बर), बड़ा दाना	गेरूआ निरोधी एवं उकठा के लिए मध्यम प्रतिरोधी
3	कोटा मसूर 3 (आरकेएल 605–3)	2020	एयू, कोटा	105–110	18–19	सामान्य बुवाई की स्थिति हेतु उपयुक्त, बड़ा दाना	उकठा के लिए मध्यम प्रतिरोधी
4	एल 4729	2019	आईएआरआई, न्यू दिल्ली	96–110	17–18	वर्षा आधारित परिस्थितियों में समय पर बुवाई के लिए उपयुक्त	उकठा के लिए मध्यम प्रतिरोधी
5	एल 4727	2018	आईएआरआई, न्यू दिल्ली	92–128	11–15	वर्षा आधारित परिस्थितियों में समय पर बुवाई के लिए उपयुक्त	उकठा के लिए मध्यम प्रतिरोधी

6	आरकेएल 14–20 (कोटा मसूर 2)	2018	एयू, कोटा	97–104	12–15	बड़ा दाना	सूखा एवं उच्च ताप के लिए सहनशील
7	आरवीएल 11–6	2017	आरएके कॉलेज, सीहोर	107–113	11–12	बड़ा दाना	उकठा सहनशील
8	एल 4717 (पूसा अगेती मसूर)	2017	आईएआर आई, न्यू दिल्ली	96–106	12–13	अतिशीघ्र पकने वाली	उकठा एवं एस्कोफाइटा ब्लास्ट निरोधक
9	कोटा मसूर 1 (आरकेएल 607–1)	2017	एयू, कोटा	98–107	10–14	सामान्य बुवाई की स्थिति हेतु उपयुक्त, बड़ा दाना	सूखा एवं उच्च ताप के लिए सहनशील
10	आईपीएल 316	2013	आईआईपी आर, कानपुर	110–115	14–15	बड़ा दाना	गेरूआ और उकठा रोग सहनशील
11	आईपीएल 81 (नूरी)	2000	आईआईपी आर, कानपुर	110–115	12–13	बड़ा दाना	गेरूआ और उकठा रोग सहनशील
12	जेएल– 3	1999	जेएनकेवीवी, सीहोर	110–115	14–15	बड़ा दाना	उकठा रोग
13	लेन्स 4076	1993	टीएआरआई, न्यू दिल्ली	135–140	14–15	गहरे हरे पत्ते, पौधा अर्ध फैलने वाला, बड़ा दाना	गेरूआ रोग निरोधी
14	के– 75 (मलिका)	1986	सीएसएयूएट, कानपुर	130–135	13–14	पत्ते गहरा हरा, पौधा अर्ध फैलने वाला, भूरे	–

छत्तीसगढ़ मसूर–1

बोने की विधि : खेत में पर्याप्त नमी होने पर विशेषकर धान वाले खेतो में मसूर की बुवाई छिटकवॉ विधि से की जाती है। परंतु अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए कतार में बोवाई ही उत्तम है। इसके लिए नारी हल या सीड ड्रिल का उपयोग करना चाहिए। अगेती फसल की बोआई हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से.मी.। पछेती फसल की बुवाई हेतु पंक्तियों की दूरी 20–25 से.मी. रखते है। पौध से पौध की दूरी 5–6 से.मी. तथा बीजों को 3–4 से.मी. की गहराई पर बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : उर्वरक की मात्रा मृदा परीक्षण के पश्चात् निर्धारित करनी चाहिए। सामान्य दशा में मसूर की अच्छी उपज लेने के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन स्फुर, 20 कि.ग्रा. पोटाश व 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर (छ.ग.) के वैज्ञानिकों के शोधों से पता चला है कि असिंचित अवस्था में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव शाखाए निकलते समय तथा फली के बनने की शुरूवाती अवस्थाओं के समय करने पर मसूर की उपज में वृद्धि होती है। सूक्ष्म तत्वों की कमी होने पर जिंक (जस्ता) 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर, बोरोन तथा मॉलिब्डेनम की कमी होने पर क्रमशः 10 कि.ग्रा. बोरेक्स पाउडर व 1.0 कि.ग्रा. अमोनिया मांलिब्डेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर मसूर की फसल से भरपूर उपज प्राप्त होती है। उर्वरकों की पूरी मात्रा बुवाई के पूर्व कूड़ों में प्रयोग करना लाभप्रद होता है। अंसिचित दशा में क्रमशः 15:30:10:10 कि.ग्रा. नत्रजन, स्फुर, पोटाश व सल्फर/हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय कूडों में देना लाभप्रद रहता है। मसूर के पौधों की बढ़वार जस्ते की कमी से भी रूक जाती है। इसके लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट छिडकना चाहिए। जिंक की कमी वाले क्षेत्रों में जिंक सल्फेट 25 कि.ग्रा./हे. की दर से अन्य उर्वरकों के साथ दिया जाता है।

खरतवार नियंत्रण : मसूर बुवाई से 45–60 दिन तक खेत खरपतवार मुक्त रहना आवश्यक है। बुवाई के 25–30 दिन बाद एक निंदाई गुडाई करने से उपज में वृद्धि होती है।

मसूर में रासायनिक खरपतवार प्रबंधनः

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	इमेजाथापायर 10: एस. एल	30	300	खरपतवार की 2–3 पत्ती की अवस्था में	ये संकरी पत्ती वाले सांवा एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5: ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई.सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास : मसूर में सूखा सहन करने की क्षमता होती है। इस फसल को सामान्य तौर पर सिंचाई की आवश्यकता नही पड़ती है। फिर भी सिंचित क्षेत्रों में 1–2 सिंचाई करने से उपज में वृद्धि होती है। पहली सिंचाई शाखा निकलते समय अर्थात बुवाई के 30–35 दिन तथा दूसरी सिंचाई फल्लियों में दाना भरते समय बुवाई के 70–75 दिन बाद करना चाहिए ध्यान रखे की पानी अधिक न होने पावे यथा संभव स्प्रिंकलर से सिंचाई करें या खेत में स्ट्रिप बनाकर हल्की सिंचाई करना लाभकारी रहता है। अधिक सिंचाई से मसूर की फसल में गलने की समस्या आती है।

फसल पद्धति : मसूर की खेती खरीफ की फसलें (धान, ज्वार, बाजरा, मक्का कपास आदि) लेने के बाद की जाती है। मसूर की मिश्रित खेती जैसे – सरसों +मसूर , जौ+मसूर का भी प्रचलन है।

पौध संरक्षण :

रोग व्याधि प्रबंध : **पौध एवं जड सड़न** : यह प्रारम्भिक अवस्था की बीमारी है जिसे रासायनिक बीजोपचार तथा खेती की निंदाई गुडाई के माध्यम से रोका या कम किया जा सकता है।

उकठा (विल्ट): रोग के लक्षण फसल की बुवाई के लगभग 15 से 20 दिन बाद दिखाई देने प्रारंभ होते है। इस रोग के प्रमुख लक्षणों में पौधों की वृद्धि रूक जाती है और पत्तियां पीली पड़कर सिकुड़ने लगती है। रोगग्रस्त पौधों की जड़ें अविकसित रह जाती है और हल्के भूरे रंग की दिखाई देती है। यदि फसल की पुष्पपुंज अवस्था में संक्रमित जड़ को अनुप्रस्थ रूप में काटकर निरीक्षण किया जाये तो इसकी कुछ जाइलम वाहिकाओं की भित्तियां हल्के भूरे रंग की दिखाई देती है और रोगजनक कवक के कवकतन्तु जाइलम वाहिकाओं की भित्तियों के आसपास फैले हुए मिलते है। यह रोग फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम लेण्टिस फफूंद द्वारा होता है।

नियंत्रण : सदैव रोगरहित प्रमाणित बीजों को ही बोना चाहिए। एक ही खेत में मसूर को कम से कम 3 वर्ष बाद बोना चाहिए। मसूर की पछेती बुवाई करनी चाहिए, क्योंकि अगेती बोई गई फसल में रोग से क्षति अधिक होती है। बीजों को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू. पी. या 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए। सदैव मसूर की म्लानि प्रतिरोधी या रोग सहनशील किस्में ही बोनी चाहिए। जैसे लेन्स–4076, पंत एल. –406 तथा रोग सहनशील किस्म एल–9–12, लेन्स–830 इत्यादि।

चूर्णिल आसिता या भभूतिया रोग (पाउडरी मिल्ड्यू) : इस रोग के लक्षण सबसे पहले पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे–छोटे सफेद चकते के रूप में दिखाई देते है जो पत्तियों की निचली सतह तथा पौधों के अन्य हरे भाग पर भी फैल जाते है। रोगग्रस्त पौधा सफेद चूर्ण से ढंका दिखाई देता है। रोग का तीव्र होने पर नये फूल नहीं आते है तथा फल्लियों पर भी इसका प्रकोप होता है, फलस्वरूप फल्लियों में बनने वाले दाने छोटे रह जाते है या फल्लियां भरती ही नहीं है। इस रोग का रोगजनक इरीसाइफी पालीगोनी/पीसी फफूंद है।

प्रबंधन : जल्दी पकने वाली किस्मों तथा समय से पूर्व बोई गई फसल पर इस रोग का संक्रमण कम होता है। खेत को बहुत ज्यादा सूखा तथा नत्रजन उर्वरक की मात्रा अधिक नहीं देना चाहिए अन्यथा रोग की तीव्रता बढ़ती है। फसल की कटाई के पश्चात् पौधों के रोग ग्रस्त भागों को एकत्रित कर जला देना चाहिए। रोगमुक्त फसल से प्राप्त बीजों का ही उपयोग बुवाई हेतु करना चाहिए तथा प्रमाणित बीज ही बोना चाहिए। चयनित

बीजों को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. या 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा/कि.ग्राम से उपचारित कर बोना चाहिए। खड़ी फसल पर रोग का आक्रमण होने पर गंधक चूर्ण (200 मेश) 25–30 कि.ग्रा/हेक्टेयर का भूरकाव करना चाहिए। छिड़काव हेतु घुलनशील गंधक (3 ग्राम) दवा का उपयोग प्रति लीटर पानी की दर से करना चाहिए। पहला छिड़काव रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखते ही तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद किया जाना चाहिए।

कीट प्रबंधन : कीट प्रबंधन की प्रचलित तकनीक रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रित करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. फसल चक्र एवं किस्म चयन: उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।
2. फसल प्रबंधन: भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।
3. निगरानी: फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।
4. मित्र जीव संवर्धन: कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।
5. रासायनिक कीट नियंत्रण: दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

कीट एवं नियंत्रण :

माहो : यह फसल की बढ़वार के समय से नुकसान पहुंचाना शुरू कर देता है। इसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 250 मि.ली./हेक्टेयर दवा को पानी में घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल में छिड़काव करें।

थ्रिप्स : ये कीट अत्यंत छोटे, पतले लम्बे तथा चपटे होते है, जो काले–भूरे रंग लिये होते है। ये पत्ती, फूल की बोड़ी तथा फलों का रस चूसते है। अतः अधिक प्रकोप की दशा में फूल मुड़ने लगते है। इसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 250 मि.ली./हेक्टेयर दवा को पानी में घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल में छिड़काव करें या इमामेक्टिन बेन्जोएट 1.50 प्रतिशत + फिप्रोनिल 3.50 प्रतिशत एस.सी. 500–700 मि.ली./हेक्टेयर डाले।

चने की इल्ली : यह फली में छेद कर दानों को खा जाती है। नम एवं बादलयुक्त वातावरण में इसका प्रकोप अधिक होता है। इसके नियंत्रण हेतु प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल में छिड़काव करें। चने की फसल में बताई गई अन्य नियंत्रण विधियों का उपयोग करें।

कटाई तथा गहाई : मसूर की फसल 110–140 दिन में पक जाती है। अतः बोने के समय के अनुसार मसूर की फसल की कटाई प्रायः फरवरी से अप्रैल तक की जाती है। जब 80 प्रतिशत फल्लियॉ पक जाये तो कटाई करना चाहिए। कटाई सम्पूर्ण पौधो को उखाड़कर सावधानीपूर्वक करना चाहिए। जिससे फल्लियां चटकने न पाये ।

उपज एवं भंडारण : मसूर की उपज किस्म बोने का समय और नमी की उपलब्धता पर निर्भर करती है। सामान्य तौर पर दाने की उपज 12–14 क्विं./हे. तथा भूसे की उपज 15–20 क्विं. प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। दानों में 9–11 प्रतिशत नमी रहने तक सुखाने के बाद उचित स्थान पर भण्डारण करना चाहिए।

मसूर के उत्पादन के मंत्र : खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्में जैसे एल 4729, कोटा मसूर 3, कोटा मसूर 4, छत्तीसगढ़ मसूर– 1 आदि का उपयोग करना चाहिए। हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें। सही समय में कटाई करना चाहिए। भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए ।

आर्थिक विश्लेषण : उन्नत विधि को अपनाकर मसूर की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 22000–24000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ रू. 40000–45000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। मसूर की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

--xx–

मटर

वानस्पतिक नाम	-	**पाइसम सैटाइवम**	**कुल**	-	**लेग्यूमिनोसी**
उपकुल	-	**पैपिलिओनेसी**	**क्रोमोसोम न.**	-	**14**
स्थानीय नाम	-	**मटर**			

मटर को दलहनों की रानी कहते हैं मटर की खेती हरी फल्ली, साबूत मटर तथा दाल के लिये की जाती है। मटर की हरी फल्लियॉ सब्जी के लिए तथा सूखे दानों का उपयोग दाल के रूप में किया जाता है। छोले के रूप में भी मटर का व्यापक उपयोग होता है। पोषक मान की दृष्टि से मटर के 100 ग्राम दाने में औसतन 11 ग्रा. पानी 22.5 ग्रा. प्रोटीन 1.8 ग्रा. वसा 62.1 ग्रा. कार्बोहाइड्रेट 64 मि.ग्रा. राइबोलेविन 0.72 मि.ग्रा. थाइमिन तथा 2.4 मि.ग्रा. नियासिन पाया जाता है । मटर के हरे व सूखे पौधो का प्रयोग जानवरों के चारे के लिए किया जाता है।

छत्तीसगढ़ में मटर की खेती मुख्य रूप से बेमेतरा, बालोद, धमतरी, गरियाबंद, कांकेर, सरगुजा इत्यादि जिलों में सफलतापूर्वक की जाती है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में इसकी खेती लगभग 51.73 हजार हेक्टेयर में की जाती है। जिसका उत्पादन 21.88 हजार मीट्रिक टन है और औसत पैदावार 423 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है जो कि राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। भारत में मटर का रकबा 0.64 मि.हे., उत्पादन 0.88 मि. टन एवं उपज 1375 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

जलवायु : मटर के लिए नम और ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। मटर के अंकुरण के लिए 22° सेल्सियस तथा वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं पर 13–18° सेल्सियस तापक्रम अनुकूल होता है। पौधो का वृद्धिकाल मे नम तथा ठण्डी जलवायु और पकते समय अपेक्षाकृत कुछ उच्च तापक्रम तथा शुष्क जलवायु चाहिए परन्तु फल्लियॉ बनते समय उच्च तापक्रम तथा शुष्क जलवायु चाहिए। फूॅल आने के समय वायु की आर्द्रता बढ़ने से पाउडरी मिल्ड्यू रोग का प्रकोप बढ़ जाता है।

भूमि का चयन :

मृदा : मटर के लिए उपजाऊ तथा अच्छे जल निकास वाली मिट्टी सर्वोत्तम है। इसकी खेती के लिए मटियार दोमट और दोमट मिट्टियॉ उपयुक्त रहती हैं। सिंचाई की सुविधा होने पर बलुई दोमट भूमियों में भी मटर की खेती की जा सकती है। छत्तीसगढ़ में खरीफ में पड़ती भर्री कन्हार एवं सिंचित डोरसा भूमि में दाल वाली मटर या बटरी की खेती की जाती है। अच्छी फसल के लिए मृदा का पी.एच. मान 6.5–7.5 होना चाहिए अम्लीय या क्षारीय भूमियों में फसल की वृद्धि अच्छी नही होती है ।

भूमि की तैयारी : रबी की अन्य फसलों की तरह मटर के लिए खेत तैयार किया जाता है। खरीफ की फसल काटने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई की जाती है। तत्पश्चात् 2–3 जुताइयॉ देशी हल से की जाती है प्रत्येक जुताई के बाद खेत में पाटा चलाना आवश्यक है जिससे ढेले टूट जाते है और भूमि में नमी का संरक्षण होता है। बुवाई के लिए पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है।

बुवाई का समय : मटर बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर में द्वितीय सप्ताह से नंवबर के द्वितीय सप्ताह तक है। विलंब से बुवाई 30 नवंबर तक कर सकते है।

बीज की मात्रा : बीज दर 75–90 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर बोनी में पर्याप्त होती है।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार : बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अधिक होता है, उन खेतों में 20 ई.सी. क्लोरोपाइरीफास का 0.2 प्रतिशत घोल से बीज को उपचारित करके बोना लाभप्रद होता है।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार :

एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी से उपचारित न करें।

(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :

बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था	अवधि (दिन)	उपज (क्विं./हे.)	विशिष्ट लक्षण	प्रतिरोधकता
1	आईपीएफडी 2014–2	2018	आईआईपीआर, कानपुर	105–110	22–23	बौने कद वाली	फल्ली भेदक, एफिड, लीफ माइनर एवं निमेटोड के लिए मध्यम प्रतिरोधी
2	पंत पी– 243	2018	जीबीपीयूएटी, पंतनगर	105–110	19–20	ऊँचे कद वाली	भभूतिया, गेरूआ, एस्कोफाइटा ब्लास्ट रूट रॉट रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी
3	आईपीएफडी 12–2	2017	आईआईपीआर, कानपुर	110	22–25	बौने कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
4	आईपीएफडी 11–5	2016	आईआईपीआर, कानपुर	105–110	19–20	बौने कद वाली	–

5	इंदिरा मटर– 1 (आरएफपी 2009–1)	2016	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	100–105	17–18	धान परती खेती हेतु उपयुक्त	भभूतिया एवं गेरूआ रोग के लिए सहनशील
6	आईपीएफडी 10–12	2014	आईआईपीआर, कानपुर	110–115	22–25	बौने कद वाली, हरा दाना	भभूतिया रोग निरोधक
7	पारस	2006	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	100–105	15–20	ऊँचे कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
8	प्रकाश (आईपीएफडी 1–10)	2006	आईआईपीआर, कानपुर	110–115	22–23	बौने कद वाली	भभूतिया एवं गेरूआ रोग निरोधक
9	विकास (आईपीएफडी 99–13)	2005	आईआईपीआर, कानपुर	100–105	23–24	बौने कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
10	शुभ्रा (आईएम 9101)	2001	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	90–100	15–20	ऊँचे कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
11	केपीएमआर 400	2001	सीएसएयूएटी, कानपुर	105–110	20–22	बौने कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
12	अंबिका	2000	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	100–125	18–19	ऊँचे कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
13	आदर्श (आईपीएफ 99–25)	2000	आईआईपीआर, कानपुर	110–115	23–24	ऊँचे कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक
14	केएमपीआर 144–1 (सपना)	1997	सीएसएयू, कानपुर	125–130	24–25	छोटे कद वाली, लीफ लेश	भभूतिया रोग निरोधक
15	जेपी 885	1992	जेएनकेवीवी, जबलपुर	135–140	21–22	ऊँचे कद वाली	भभूतिया रोग निरोधक

पारस

अंबिका

इंदिरा मटर–1

बोने की विधि : खेत को अच्छी तरह से तैयार करने के बाद दुफल व देशी हल अथवा सीड ड्रील से कतार की दूरी 25–30 से.मी. तथा पौध से पौध की दूरी 8–10 से.मी. रखते हुए बुवाई की जाती है। यथा संभव बुवाई के लिए दो चाड़ी वाली नारी हल का उपयोग करते है। आगे वाली चाड़ी से खाद तथा पीछे वाली चाड़ी से बीज को डालना चाहिए ।

उतेरा बोनी : इस पद्धति में धान काटने के 15–20 दिन पहले खड़ी धान की फसल में मटर के बीज को मध्य अक्टूबर से नवंबर के प्रारंभ तक छिटकवां विधि से बुवाई करतें है। धान फसल की कटाई तक मटर फसल अंकुरित होकर 3–4 पत्तियों की अवस्था में आ जाती है। उतेरा खेती से अधिकतम उपज के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए :

धान की शीघ्र, मध्यम अवधि की उन्नत किस्मों का चयन करना चाहिए। डोरसा एवं कन्हार भुमि का चयन करें। उन्नत किस्मों के 100–120 किलो उपचारित बीज/हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए। बुवाई अक्टूबर माह तक कर लेनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : उर्वरक की मात्रा मृदा परीक्षण के पश्चात् निर्धारित करनी चाहिए। सामान्य दशा में मटर की अच्छी उपज लेने के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन स्फुर, 20 कि.ग्रा. पोटाश व 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर (छ.ग.) के वैज्ञानिकों के शोधों से पता चला है कि असिंचित अवस्था में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव शाखाए निकलते समय तथा फली के बनने की शुरूवाती अवस्थाओं के समय करने पर मटर की उपज में वृद्धि होती है। सूक्ष्म तत्वों की कमी होने पर जिंक (जस्ता) 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर, बोरोन तथा मॉलिब्डेनम की कमी होने पर क्रमशः 10 कि.ग्रा. बोरेक्स पाउडर व 1.0 कि.ग्रा. अमोनिया मांलिब्डेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर मटर की फसल से भरपूर उपज प्राप्त होती है। उर्वरकों की पूरी मात्रा बुवाई के पूर्व कूड़ों में प्रयोग करना लाभप्रद होता है।

खरपतवार नियंत्रण : फसल एवं खरपतवार की प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवधि बुआई के 15–30 दिनों तक रहती है इसलिए प्रथम निंदाई, बोआई के 20–25 दिनों के अंदर तथा दूसरी निंदाई आवश्यकतानुसार फूल–फल की अवस्था में करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार प्रबंधन हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग कर खरपतवार प्रबंधन करना चाहिए। खरपतवारनाशियों का खेत में छिड़काव करने हेतु हमेशा फ्लैट फैन नोजल युक्त पम्प से 500–600 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से घोल बनाकर प्रयोग करना उचित रहता है।

मटर में रासायनिक खरपतवार प्रबंधन:

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	मैट्रीब्यूजिन 70: डब्ल्यू. पी.	100	140	बोनी के 0–3 दिन के अंदर या बोनी के 15 दिन बाद किन्तु 20 दिन के अंदर।	ये चुनिन्दा संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों पर नियंत्रण करता है।

2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5: ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई.सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास : मटर की फसल सूखे के प्रति अधिक सहनशील है। प्रथम सिंचाई बुआई के 30–35 दिन बाद एवं द्वितीय सिंचाई 60–65 दिन बाद करना चाहिए। मटर में हल्की सिंचाई करनी चाहिए। पाला पड़ने की संभावना होने पर फसल में हल्की सिंचाई करनी चाहिए। बौनी किस्में पानी अधिक चाहती है अतः 3 सिंचाई से अच्छी उपज ली जा सकती है।

फसल पद्धति : मटर को मिश्रित फसल के रूप में चना, गेहूँ जौ तथा सरसों आदि के साथ उगाया जा सकता है। मटर–मक्का, मटर–बाजरा, मटर–चना, बाजरा–मटर–धान आदि फसल चक्र अपनाने से भूमि की उर्वरता में सुधार होता है और अधिक उपज मिलता है।

पौध संरक्षण :

रोग व्याधि प्रबंध :मटर में मुख्य रूप से भभूतिया रोग तथा जड़ विगलन रोग लगता है। मटर की फसल जल्दी बोने से उकठा रोग का प्रकोप भी होता है। अधिक नमी वाले मौसम में पाउडरी मिल्ड्यू (भभूतिया) रोग का प्रकोप अधिक होता है। रोग रोधी किस्मों को लगायें।

चूर्णिल आसिता या भभूतिया रोग (पाउडरी मिल्ड्यू) : इस रोग के लक्षण सबसे पहले पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे–छोटे सफेद चकते के रूप में दिखाई देते है जो पत्तियों की निचली सतह तथा पौधों के अन्य हरे भाग पर भी फैल जाते है। रोगग्रस्त पौधा सफेद चूर्ण से ढंका दिखाई देता है। रोग का तीव्र होने पर नये फूल नहीं आते है तथा फल्लियों पर भी इसका प्रकोप होता है, फलस्वरूप फल्लियों में बनने वाले दाने छोटे रह जाते है या फल्लियां भरती ही नहीं है।

इस रोग का रोगजनक इरीसाइफी पालीगोनी/पीसी फफूंद है।

प्रबंधन : जल्दी पकने वाली किस्मों तथा समय से पूर्व बोई गई फसल पर इस रोग का संक्रमण कम होता है। खेत को बहुत ज्यादा सूखा तथा नत्रजन उर्वरक की मात्रा अधिक नहीं देना चाहिए अन्यथा रोग की तीव्रता बढ़ती है। फसल की कटाई के पश्चात् पौधों के रोग ग्रस्त भागों को एकत्रित कर जला देना चाहिए। रोगमुक्त फसल से प्राप्त बीजों का ही उपयोग बुवाई हेतु करना चाहिए तथा प्रमाणित बीज ही बोना चाहिए। चयनित बीजों को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. या 10 ग्राम ट्राइकोडर्मा/कि.ग्राम से उपचारित कर बोना चाहिए। खड़ी फसल पर रोग का आक्रमण होने पर गंधक चूर्ण (200 मेश) 25–30 कि.ग्रा/हेक्टेयर का भूरकाव करना चाहिए। छिड़काव हेतु घुलनशील गंधक (3 ग्राम) दवा का उपयोग प्रति लीटर पानी की दर से करना चाहिए। पहला छिड़काव रोग के प्रारंभिक लक्षण दिखते ही तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद किया जाना चाहिए। रोग अवरोधी किस्में जैसे रचना, पंत पी 5, डी.एम.आर 11, एच.यू.पी. 2, जे.पी. 885, के.एफ.पी. 103, अंबिका, शुभ्रा, अपर्णा, आजाद पी 4, पूसा पन्ना आदि को लगाना चाहिए।

कीट प्रबंधन : कीट प्रबंधन की प्रचलित तकनीक

रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रित करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. **फसल चक्र एवं किस्म चयन**: उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।

2. **फसल प्रबंधन**: भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।

3. **निगरानी**: फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।

4. **मित्र जीव संवर्धन**: कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।

5. **रासायनिक कीट नियंत्रण**: दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

कीट :

दीमक : यह कीट, जड़, तना, पत्ती आदि संपूर्ण भागों को खाकर नष्ट कर देती है। जिससे संपूर्ण फसल को अत्याधिक हानि होती है।

नियंत्रण : क्लोरोपायरीफास 20 ई.सी. की 1.0 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलानी चाहिए। जुताई के समय लिन्डेन धूल को 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलाना चाहिए। खड़ी फसल में 0.05 क्लोरोपायरीफास के घोल का पौधों की जड़ों के पास छिड़काव करना चाहिए।

फली भेदक : इस कीट की इल्लियां (लार्वा) फलियों के अंदर घुसकर हानि पहुंचाती है। क्षतिग्रस्त फलियों में

छिद्र दिखाई देते है। जब नर कीटों की संख्या प्रति रात्रि प्रति ट्रैप (यौन आकर्षक जाल) में 4–5 तक पहुंचने लगे तो समझना चाहिए कि अब कीट नियंत्रण आवश्यक है। खड़ी फसल में 1–2 सूड़ी एक मीटर लम्बी प्रति पंक्ति में या प्रति 10 पौधों में मिलने लगे तो तुरंत फसल सुरक्षा के उपाय अपनाने चाहिए।

नियंत्रण :

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें। न्यूक्लियर पॉली हाइड्रोसिस वायरस (एन.पी.वी.) का 250 लार्वा (सूड़ी) तुल्य तीन बार खड़ी फसल पर छिड़काव करें। नीम की निरबौली के सत् (एन.एस.के.ई.) के 45 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। कीटनाशक डाइमिथोएट 0.03 प्रतिशत, मिथाइल डेमटान (मेटासिस्टाक्स) अथवा इन्डोक्साकार्ब 0.01 प्रतिशत आदि रसायनों का 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर दो बार करना चाहिए।

माहूँ (एफिड) : मटर की फसल में इस कीट का प्रकोप कम होता है। कभी–कभी जनवरी के महीने में तापमान सामान्य से अधिक होने पर माहूँ का प्रकोप होता है। माहूँ पौधों के तने, पत्तियों और फलियों का रस चूसकर फसल को क्षतिग्रस्त कर देता है।

थ्रिप्स : मटर की फसल में थ्रिप्स कीट के प्रकोप से सर्वाधिक नुकसान होता है और अत्याधिक प्रकोप होने पर 50–70 प्रतिशत तक उपज में कमी आती है। मुख्यत: इसका प्रकोप मौसम खराब होने अर्थात् बदली आने पर अत्याधिक होता है। इस कीट के प्रकोप होने पर पत्तियां नीचे की ओर मुड़ जाती है तथा कीट, पत्तियों और फलियों का रस चूसकर फसल को क्षतिग्रस्त कर देता है।

नियंत्रण : इससे बचाव के लिए डाइमेथोएट 0.03 प्रतिशत अथवा मेटासिस्टाक्स 0.02 प्रतिशत का पानी में घोल बनाकर 500–600 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

तना मक्खी : प्रौढ़ कीट धात्विक गहरे रंग के होते है। मैगट पत्ती में सुरंग बनाकर आहार ग्रहण करता है और मोटी शिरा में से होता हुआ तने में प्रवेश करता है। इसके प्रकोप से पौधे पीले पड़ने लगते है एवं छोटे पौधे मुरझाकर सूख जाते है। ग्रसित पौधे में फल्ली भी नहीं लगती है।

पत्ती सुरंगक कीट : श्रृंगिकाएं छोटी होती हैं जिसका खण्ड तथा स्पर्शक काले रंग का होता है। मादा मक्खी पत्ती के अंदर अंडे देती है। इसके मैगट पत्ती में सुरंग बनाकर नुकसान पहुंचाते है। सुरंग बनने से पत्तिया झुलस जाती है।

नियंत्रण : जहां संभव हो तना मक्खी से बचने हेतु मटर की बुवाई देर से करनी चाहिए। प्राकृतिक शत्रुओं जैसे कैम्पोलेटिस, बर्र, क्राइसोपरला और मकड़ी को संरक्षित करना चाहिए। फल्ली बेधक के अंडे अथवा नवजात सूड़ी दिखने पर एन.पी.वी. 250 सूड़ी तुल्यांक अथवा बी.टी. 1 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से 0.5 प्रतिशत गुड़ तथा 0.1 प्रतिशत टीपाल के साथ 500–600 लीटर पानी में मिलाकर फसल के ऊपर छिड़काव करें। नीम के बीज का सत्व को 5 प्रतिशत अथवा निम्बेसीडिन की 4 मि.ली. प्रति लीटर पानी को 1 प्रतिशत साबुन के साथ घोल बनाकर प्रयोग करें। बीज को इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ.एस. की 3 मि.ली. अथवा थायोमेथोक्जाम 35 एफ.एस. की 2 मि.ली. मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज में मिलाकर बीजोपचार करें।

कटाई एवं गहाई : सामान्य रूप से जब पौधों की पत्तियां पीली अथवा हल्की भूरी हो जाती है, फसल की कटाई कर ली जाती है। अधिक पक जाने पर फलियां चटकने लगती है। काटी गयी फसल को एक स्थान पर इकट्ठा करके साफ खलिहान में 4–5 दिनों तक सुखाकर मड़ाई की जाती है। मड़ाई थ्रैसर से या फिर बैलों या टैक्टर को पौधों के ऊपर चलाकर की जाती है। भूसे और दाने को पंखों या प्राकृतिक हवा से अलग कर लिया जाता है।

उपज एवं भण्डारएण : मटर की फसल से औसतन 20–25 क्विं दाना और 50–50 क्विं./हे. भूसा प्राप्त होता है। दानो में जब 9–11 प्रतिशत नमी रह जाये तब सूखे व स्वच्छ स्थान पर दानो का भण्डारण करना चाहिए।

मटर के उत्पादन के मंत्र : खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्में जैसे आईपीएफडी 11–5, आईपीएफडी 2014–2, पंत पी– 243, इंदिरा मटर–1 आदि का उपयोग करना चाहिए। हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें। सही समय में कटाई करना चाहिए । भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए ।

आर्थिक विश्लेषण : उन्नत विधि को अपनाकर मटर की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 25000–30000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ :. 45000–50000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। मटर की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

--xx--

तिवड़ा

वानस्पतिक नाम	-	**लेथाइरस सैटाइवस**	**कुल**	-	**लेग्यूमिनोसी**
उपकुल	-	**पैपिलिओनेसी**	**क्रोमोसोम न.**	-	**2 एन - 14**
स्थानीय नाम	-	**लाखड़ी/खेसारी**			

भारत में तिवड़ा की खेती दाना व चारा के लिए रबी में की जाती है। तिवड़ा छत्तीसगढ़ की प्रमुख दलहनी फसल है। धान आधारित कृषि में इस फसल की अहम भूमिका है। प्रदेश में सिंचाई के सीमित संसाधन होने के कारण से द्विफसली कृषि पद्यति कृषि का अनुपम तरीका छत्तीसगढ़ के किसान उतेरा के रूप में दीर्घकाल से अपनाते चले आ रहे है।

तिवड़ा में 28 प्रतिशत प्रोटीन के साथ–साथ अन्य उपयोगी पोषक तत्व पाये जाते है। हरी फल्लियों को सब्जी के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। इसके दानों में हानिकारक पदार्थ एन आक्सिलिल 2, 3 डाई एमीनो प्रोपिओनिक अम्ल (ओ.डी.ए.पी.) या बीटा आक्सिपेनिल डाई एमीनो अल्फा एलेनीन (बी.ओ.ए.ए.) पाया जाता है। जो गठिया रोग, नीचले कमर में लकवा, ग्वाइटर आदि रोग पैदा करते है। वैज्ञानिकों के मतानुसार तिवड़ा की अधिक मात्रा (नित्य आहार का 1/3 भाग) में लंबे समय (4–6 माह) तक सतत् सेवन करने पर पैरो की मांसपेशियों के स्नायुतंत्र पर विपरीत असर होने का अंदेशा रहता है। स्थानीय विकसित किस्मों में इसकी मात्रा मात्र 0.07 प्रतिशत है। नवीन किस्मों के साथ–साथ उन्नत कृषि अपनाकर इसकी पैदावार बढ़ाई जा सकती है।

छत्तीसगढ़ में तिवड़ा की खेती मुख्य रूप से मुंगेली, बालोद, बेमेतरा, राजनांदगांव, धमतरी, कबीरधाम इत्यादि जिलों में सफलतापूर्वक की जाती है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में इसकी खेती लगभग 212.96 हजार हेक्टेयर में की जाती है। जिसका उत्पादन 107.12 हजार मीट्रिक टन है और औसत पैदावार 503 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है जो कि राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। भारत में तिवड़ा का रकबा 0.28 मि.हे., उत्पादन 0.26 मि.टन एवं उपज 903 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

जलवायु : छत्तीसगढ़ में तिवड़ा रबी मौसम की एक प्रमुख फसल है। छत्तीसगढ़ में तिवड़ा की खेती सामान्यतः असिंचित अवस्था में की जाती है। तिवड़ा के अंकुरण के लिए कुछ उच्च तापक्रम की आवश्यकता होती है। ग्रीष्मकाल के प्रारंभ में यदि अचानक उच्च तापमान हो जाता है, तब भी फसल को नुकसान होता है। साधारण रूप से तिवड़ा की फसल को बीज से बीज (बुवाई से कटाई तक) के दौरान 15^{0} से 25^{0} सेंटीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है। यदि मानसून की वर्षा प्रभावी रूप से सितम्बर के अंत में या अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में हो जाती है तब असिंचित दशा में तिवड़ा की भरपूर फसल मिल जाती है।

भूमि का चयन :

मृदा : तिवड़ा की खेती मुख्यतः भारी निचली भूमियों में की जाती है। अधिक जल धारण करने वाली गहरी काली मिट्टी में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। इस फसल की खेती के लिए छ.ग. की डोरसा

एवं कन्हार भुमि उत्तम है। उतेरा भी साधारणतः डोरसा एवं कन्हार भुमियों में डाला जाता है।

भूमि की तैयारी : इसके अच्छे अंकुरण एवं अधिक उत्पादन के लिए खेत साफ–सुथरा तथा मिट्टी भुरभुरी होनी चाहिए। इसके लिए ओल (बतर) आने पर 2–3 बार जुताई करें तथा पाटा चलाकर खेत की मिट्टी को समतल करना चाहिए। उतेरा बोनी में फसल काटने के 15–20 दिन पूर्व खेत में बीज डालकर पानी निथार देना चाहिए।

बुवाई का समय : तिवड़ा बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर में द्वितीय सप्ताह से नंवबर के द्वितीय सप्ताह तक है। विलंब से बुवाई 30 नवंबर तक कर सकते है।

बीज की मात्रा : बीज दर 40–50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर बतर बोनी में पर्याप्त होती है।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार :

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेंडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अधिक होता है, उन खेतों में 20 ई.सी. क्लोरोपाइरीफास का 0.2 प्रतिशत घोल से बीज को उपचारित करके बोना लाभप्रद होता है।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार :

एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी से उपचारित न करें।

(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :

बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था	अवधि (दिन)	उपज (क्विं./हे.)	विशिष्ट लक्षण	प्रतिरोधकता
1	महातिवड़ा	2008	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	110–115	15–16	ओ.डी.ए.पी. कम, मात्रा (0.074), गुलाबी फूल	सूखे के प्रति सहनशील, भभूतिया रोग सहनशील
2	प्रतीक	2006	इं.गां.कृ .वि. वि., रायपुर	110–115	15–16	ओ.डी.ए.पी. कम, मात्रा (0.07–0.08)	भभूतिया रोग एवं सूखे के लिए सहनशील
3	रतन	1997	आईएआरआई , न्यू दिल्ली	110–115	15–16	ओ.डी.ए.पी. कम, बड़ा दाना, नीला फूल	सूखे के प्रति सहनशील

प्रतीक

महातिवड़ा

बोने की विधि : खेत को अच्छी तरह से तैयार करने के बाद दुफल व देशी हल अथवा सीड ड्रील से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौध से पौध की दूरी 8–10 से.मी. रखते हुए बुवाई की जाती है। यथा संभव बुवाई के लिए दो चाड़ी वाली नारी हल का उपयोग करते है। आगे वाली चाड़ी से खाद तथा पीछे वाली चाड़ी से बीज को डालना चाहिए ।

उतेरा बोनी : इस पद्धति में धान काटने के 15–20 दिन पहले खड़ी धान की फसल में तिवड़ा के बीज को मध्य अक्टूबर से नवंबर के प्रारंभ तक छिटकवां विधि से बुवाई करतें है। धान फसल की कटाई तक तिवड़ा फसल अंकुरित होकर 3–4 पत्तियों की अवस्था में आ जाती है। उतेरा खेती से अधिकतम उपज के लिए **निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए** :धान की शीघ्र, मध्यम अवधि की उन्नत किस्मों का चयन करना चाहिए। डोरसा एवं कन्हार भुमि का चयन करें । उन्नत किस्मों के 75–80 किलो उपचारित बीज/हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए ।बुवाई अक्टूबर माह तक कर लेनी चाहिए ।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : उर्वरक की मात्रा मृदा परीक्षण के पश्चात् निर्धारित करनी चाहिए। सामान्य दशा में तिवड़ा की अच्छी उपज लेने के लिए 20 कि.ग्रा. नत्रजन, स्फुर, 20 कि.ग्रा. पोटाश व 20 कि.ग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर (छ.ग.) के वैज्ञानिकों के शोधों से पता चला है कि असिंचित अवस्था में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव शाखाए निकलते समय तथा फली के बनने की शुरूवाती अवस्थाओं के समय करने पर तिवड़ा की उपज में वृद्धि होती है। सूक्ष्म तत्वों की कमी होने पर जिंक (जस्ता) 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर, बोरोन तथा मॉलिब्डेनम की कमी होने पर क्रमशः 10 कि.ग्रा. बोरेक्स पाउडर व 1.0 कि.ग्रा. अमोनिया मांलिब्डेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर तिवड़ा की फसल से भरपूर उपज प्राप्त होती है। उर्वरकों की पूरी मात्रा बुवाई के पूर्व कूड़ों में प्रयोग करना लाभप्रद होता है।

खरपतवार नियंत्रण : फसल एवं खरपतवार की प्रतिस्पर्धा की क्रान्तिक अवधि बुआई के 15–30 दिनों तक रहती है। इसलिए प्रथम निंदाई, बुवाई के 20–25 दिनों के अंदर तथा दूसरी निंदाई आवश्यकतानुसार फूल–फल की अवस्था में करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार प्रबंधन हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी

रसायनों का प्रयोग कर खरपतवार प्रबंधन करना चाहिए। खरपतवारनाशियों का खेत में छिड़काव करने हेतु हमेशा फ्लैट फैन नोजल युक्त पम्प से 500–600 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से घोल बनाकर प्रयोग करना उचित रहता है।

तिवड़ा में रासायनिक खरपतवार प्रबंधन:

(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :

बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	इमेजाथापायर 10: एस. एल	30	300	खरपतवार की 2–3 पत्ती की अवस्था में	ये संकरी पत्ती वाले सांवा एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5: ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई. सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास : प्राय: तिवड़ा की खेती असिंचित दशा में की जाती है। यदि सिंचाई की सुविधा हो तो हल्की सिंचाई बुवाई के 45–60 दिन बाद स्प्रिंकलर से अवश्य करनी चाहिए। फूल आते समय तिवड़ा की फसल में सिंचाई करने से हानि होती है। स्प्रिंकलर विधि से तिवड़ा की फसल में सिंचाई करना सर्वोत्तम होता है।

पौध संरक्षण :

रोग व्याधि प्रबंध :

उकठा: उकठा रोग पौधों में दो अवस्थाओं में देखा गया है। प्रथम अवस्था में बुवाई के बाद 30 दिनों तक एवं द्वितीय अवस्था में बुवाई के 40 दिनों के बाद होता है। इस रोग में पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती है एवं रोगी पौधा सूख जाता है।

नियंत्रण : गर्मी के मौसम में खेती की गहरी जुताई करनी चाहिए। बुवाई अक्टूबर माह के अंत या नवम्बर माह के प्रथम सप्ताह में कर देनी चाहिए। गोबर की खाद 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने पर उकठा रोग में कमी आती है। बीज फफूंदीनाशक से शोधित करके बोयें। वीटावेक्स 1 ग्राम + 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा के साथ मिलाकर प्रति कि.ग्रा. बीज शोधित करके बोना चाहिए। उकठा रोग रोधी प्रजातियां प्रयोग करना चाहिए। रोगग्रस्त फसल की सिंचाई नहीं करनी चाहिए। यदि संभव हो तो उन खेतों में जहां रोग पाया गया हो, वहां तीन वर्षो तक तिवड़ा की खेती नहीं करना अच्छा होता है।

शुष्क-मूल विगलन (ड्राई रूट रॉट) :

यह मृदा जनित रोग है। पौधों में संक्रमण राइजोक्टोनिया बटाटीकोला नामक कवक से होता है। इस रोग का प्रकोप पौधों में फूल आने और फलियां बनते समय होता है। रोग से प्रभावित पौधों की जड़े अविकसित तथा काली होकर सड़ने लगती है एवं आसानी से टूट जाती है। जड़ों के दिखाई देने वाले भाग और तनों के आंतरिक भाग पर छोटे काले रंग के फफूंदी के बीजाणु देखे जा सकते है।

नियंत्रण : उकठा रोग में दी गई नियंत्रण विधियों को अपनाना चाहिए। सिंचाई करने से इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। पिछली फसल के सड़े–गले अवशेष खेत में नहीं छोड़ने चाहिए। बुवाई और अंकुरण के समय मृदा में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए। बीज शोधित करके बोना चाहिए।

कीट प्रबंधन : **कीट प्रबंधन की प्रचलित तकनीक** : रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रित करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. **फसल चक्र एवं किस्म चयन**: उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।

2. **फसल प्रबंधन**: भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।

3. **निगरानी**: फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।

4. **मित्र जीव संवर्धन**: कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।

5. **रासायनिक कीट नियंत्रण**: दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

कीट :

दीमक : यह जड़ों को काटकर उसके अंदर रहती है। ग्रसित पौधों के ऊपर दीमक मिट्टी की सुरंगे बनाकर उसके भीतर रहती है। यह कीट, जड़, तना, पत्ती आदि संपूर्ण भागों को खाकर नष्ट कर देती है। जिससे संपूर्ण फसल को अत्याधिक हानि होती है।

नियंत्रण :क्लोरोपायरीफास 20 ई.सी. की 1.0 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलानी चाहिए। जुताई के समय लिन्डेन धूल को 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलाना चाहिए। खड़ी फसल में 0.05 क्लोरोपायरीफास के घोल का पौधों की जड़ों के पास छिड़काव करना चाहिए।

फली भेदक : इस कीट की इल्लियां (लार्वा) फलियों के अंदर घुसकर हानि पहुंचाती है। क्षतिग्रस्त फलियों में छिद्र दिखाई देते है। जब नर कीटों की संख्या प्रति रात्रि प्रति ट्रैप (यौन आकर्षक जाल) में 4–5 तक पहुंचने लगे तो समझना चाहिए कि अब कीट नियंत्रण आवश्यक है। खड़ी फसल में 1–2 सूड़ी एक मीटर लम्बी प्रति पंक्ति में या प्रति 10 पौधों में मिलने लगे तो तुरंत फसल सुरक्षा के उपाय अपनाने चाहिए।

नियंत्रण : ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें। न्यूक्लियर पॉली हाइड्रोसिस वायरस (एन.पी.वी.) का 250 लार्वा (सूड़ी) तुल्य तीन बार खड़ी फसल पर छिड़काव करें। नीम की निरबौली के सत् (एन.एस.के.ई.) के 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। कीटनाशक डाइमिथोएट 0.03 प्रतिशत, मिथाइल डेमटान (मेटासिस्टाक्स) अथवा इन्डोक्साकार्ब 0.01 प्रतिशत आदि रसायनों का 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर दो बार करना चाहिए।

माहूँ (एफिड) : तिवड़ा की फसल में इस कीट का प्रकोप कम होता है। कभी–कभी जनवरी के महीने में तापमान सामान्य से अधिक होने पर माहूँ का प्रकोप होता है। माहूँ पौधों के तने, पत्तियों और फलियों का रस चूसकर फसल को क्षतिग्रस्त कर देता है।

थ्रिप्स : तिवड़ा की फसल में थ्रिप्स कीट के प्रकोप से सर्वाधिक नुकसान होता है और अत्याधिक प्रकोप होने पर 50–70 प्रतिशत तक उपज में कमी आती है। मुख्यतः इसका प्रकोप मौसम खराब होने अर्थात् बदली आने पर अत्याधिक होता है। इस कीट के प्रकोप होने पर पत्तियां नीचे की ओर मुड़ जाती है तथा कीट, पत्तियों और फलियों का रस चूसकर फसल को क्षतिग्रस्त कर देता है।

नियंत्रण : इससे बचाव के लिए डाइमेथोएट 0.03 प्रतिशत अथवा मेटासिस्टाक्स 0.02 प्रतिशत का पानी में घोल बनाकर 500–600 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं गहाई : सामान्य रूप से जब पौधों की पत्तियां पीली अथवा हल्की भूरी हो जाती है, फसल की कटाई कर ली जाती है। अधिक पक जाने पर फलियां चटकने लगती है। काटी गयी फसल को एक स्थान पर इकट्ठा करके साफ खलिहान में 4–5 दिनों तक सुखाकर मड़ाई की जाती है। मड़ाई थ्रैसर से या फिर बैलों या टैक्टर को पौधों के ऊपर चलाकर की जाती है। भूसे और दाने को पंखों या प्राकृतिक हवा से अलग कर लिया जाता है।

उपज एवं भण्डारण : बतर बुवाई करने से लगभग 10–15 क्विं. प्रति हेक्टेयर तथा उतेरा फसल से 6–8 क्विं. प्रति हैक्टेयर उपज प्राप्त होती है। भण्डारण योग्य नमी (9 प्रतिशत) होने पर सूखे एवं स्वच्छ स्थान पर भण्डारण करना चाहिए। सुरक्षित भण्डारण के लिए कोठी या स्टील बिन का प्रयोग सर्वोत्तम है। वैसे तो बीज भण्डारण के लिए नये बोरों का उपयोग करना चाहिए। यदि नये बोरें उपलब्ध न हो तो पुराने बोरों को उबलते पानी में 15 मिनट तक डुबाकर एवं सुखाकर बीज भरें। नीम की सूखी पत्तियों को बीज में मिलाकर कोठियों में भरकर रखने से कीट प्रकोप कम होता है। दलहनी बीज (तिवड़ा) में राख मिलाकर रखने से कीट प्रकोप नहीं होता है।

तिवड़ा दाल का सुरक्षित उपयोग : तिवड़ा का उपयोग आमतौर पर दाल एंव बेसन के रूप में किया जाता है। इसके दानो में 0.4 प्रतिशत से अधिक हानिकारक पदार्थ (ओ.डी.ए.पी.) होने पर यह हानिकारक होता है। इसमें विद्यमान अपोषक तत्व की मात्रा को कम किया जा सकता है। क्योकि ये तत्व पानी में घुलनशील है इसलिए दाल बनाने के पूर्व सामान्य पानी में 6 घण्टे तक भिगोकर रखने तथा असके बाद धूप में सुखाकर दाल बनाने पर 25 प्रतिशत तक अपोषक तत्व की मात्रा कम हो जाती है। इसी तरह तिवड़ा को गुनगुने (500 सेल्सियस) पानी में 3 घण्टे तक भिगाकर सुखाने के बाद दाल बनाने पर 40 प्रतिशत तक अपोषक तत्व की मात्रा कम हो जाती है। अनुसंधान से स्थापित हो चुका है कि ओ.डी.ए.पी. की सबसे ज्यादा मात्रा तिवड़ा बीज के भ्रुण में पायी जाती है। दाल बनाने से भ्रुण एवं छिलका अलग हो जाने पर 43 प्रतिशत तक अपोषक तत्व की मात्रा पुनः कम हो जाती है। इसकी दाल को अन्य दालों के साथ मिलाकर खाया जा सकता हैं। तिवड़ा दाल को चना या अरहर के साथ 1:4 के अनुपात में मिलाकर इस्तेमाल करना अधिक सुरक्षित है।

तिवड़ा के उत्पादन के मंत्र : खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्में जैसे रतन, प्रतीक, महातिवड़ा आदि का उपयोग करना चाहिए। हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें। सही समय में कटाई करना चाहिए। भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए ।

आर्थिक विश्लेषण : उन्नत विधि को अपनाकर तिवड़ा की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 18000–20000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ रू. 30000–35000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। तिवड़ा की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

--xx--

कुल्थी

वानस्पतिक नाम	-	**मैक्रोटिलोमा यूनिफ्लोरम**	**कुल**	-	**लेग्यूमिनोसी**
उपकुल	-	**पैपिलिओनेसी**	**क्रोमोसोम नं.**	-	**20, 22**
स्थानीय नाम	-	**हरवा**			

छत्तीसगढ़ के शुष्क तथा में आदिवासी बहुल क्षेत्रों में बोई जाने वाली फसलों में कुल्थी प्रमुख दलहनी फसल है। इसे पशुओं में विशेषकर गायों, भैसों तथा घोडों के सूखे तथा हरे चारे के लिए भी उगाया जाता है। प्रतिकूल परिस्थितियों (सूखा एवं अधिक वर्षा) में भी इसकी अच्छी उपज, सूखा प्रतिरोधक क्षमता, कम अवधि मे पकने , कीटो व रोगों द्वारा कम नुकसान के कारण किसान कुल्थी फसल की खेती करते है। कुल्थी दाल में लगभग 22 प्रतिशत प्रोटीन एवं 57.2 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है।

छत्तीसगढ़ में कुल्थी की खेती मुख्य रूप से कोण्डागांव, जशपुर, कबीरधाम, नारायणपुर, सुरजपुर इत्यादि जिलों में सफलतापूर्वक की जाती है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में इसकी खेती लगभग 17.46 हजार हेक्टेयर में की जाती है। जिसका उत्पादन 7.09 हजार मीट्रिक टन है और औसत पैदावार 406.07 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर है जो कि राष्ट्रीय औसत से कम है। भारत में कुल्थी का रकबा 0.47 मि.हे., उत्पादन 0.23 मि.टन एवं उपज 485 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

जलवायु : कुल्थी खरीफ मौसम की फसल है जिसे वर्षा पोषित परिस्थितियों में उगाया जाता है। फसल वृद्धि और विकास के लिए 18^{0}–23^{0} सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। अधिक तापमान (30^{0} सेल्सियस से ऊपर) पर पौध वृद्धि या पुष्पन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसकी खेती 100–125 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले स्थानों में सफलतापूर्वक की जाती है। खरीफ के मौसम में कुल्थी की बुवाई चारे के उद्देश्य से करते है क्योंकि इस समय इसकी वानस्पतिक वृद्धि अधिक होती है एवं फल्लीयॉ कम या नहीं लगती है। मध्य खरीफ की जलवायु में कुल्थी की बुवाई करने से अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

भूमि का चयन :

मृदा : इस फसल की काश्त के लिए दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त है। अच्छे जल निकास वाली दोमट मटियार भूमि में इसकी अच्छी उपज मिलती है। साधारणतः कुल्थी हल्की से हल्की भूमि में उगाई जा सकती है जहाँ पर अन्य फसल की खेती करना संभव नही है। पहाडियों के ढलानों, पथरीली एवं बलुई मिट्टी में भी यह फसल औसतन अच्छी पैदावार देती है।

भूमि की तैयारी : जुलाई में बोई जाने वाली फसल के लिए मानसून प्रांरभ होते ही खेत की 2–3 बार जुताई कर समतल कर लें। दीमक से बचाव के लिए क्लोरपायरीफास 1.5 प्रतिशत 20 किलो चूर्ण प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिला दें। हल्की भूमि में दीमक का प्रकोप अधिक होता है।

बुवाई का समय: कुल्थी अगस्त माह के अंतिम सप्ताह से 15 सितम्बर तक बोई जाती है। बस्तर में खरीफ मौसम की बुवाई जुलाई–अगस्त तथा रबी मौसम की बुवाई सितम्बर–अक्टूबर में की जाती है।

बीज की मात्रा : उन्नतशील जातियों की 25–30 कि.ग्रा. बीज एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होती है।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार :

बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेंडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार :

एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी से उपचारित न करें।

(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :

बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में :

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था	अवधि (दिन)	उपज (क्विं./हे.)	विशिष्ट लक्षण	प्रतिरोधकता
1	सबरी कुल्थी (बीएसपी 17–3)	2021	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	103	9.42	हल्के भूरे रंग का बीज आवरण	जड़ सड़न रोग की न्यूनतम प्रकोप, लीफ हापर और सफेद मक्खी का अपेक्षाकृत प्रकोप कम होता है।
2	अलख कुल्थी (बीएसपी 17–1)	2021	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	106	9.02	हल्के भूरे रंग का बीज	शुष्क जड़ सड़न रोग अपेक्षाकृत न्यूनतम प्रकोप
3	बिलासा कुल्थी (बीएसपी–15–1)	2019	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	103	10.18	काले रंग का बीज आवरण	सरकोस्पोरा लीफ ब्लाईट रोग और शुष्क जड़ सड़न रोग का कम प्रकोप
4	छत्तीसगढ़ कुल्थी–2 (बीडब्ल्यूएच–1)	2018	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	112	7.54	काले रंग का बीज आवरण	पाउडरी मिल्डयू रोग प्रतिरोधी, चेक की तुलना में पीली मोजेक रोग का कम प्रकोप, एके–21 की तुलना में सरकोस्पोरा लीफ ब्लाइट रोग का कम प्रकोप
5	छत्तीसगढ़ कुल्थी–3 (बीएचजी–3)	2017	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	103	9.19	मलाई रंग का बीज आवरण,	बीज चटकने के प्रतिरोधी
6	इंदिरा कुल्थी– 1 (आईकेजीएच–1)	2011	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	102	6.50	काले रंग का बीज आवरण	चेक की तुलना में कम पीला मोजेक रोग प्रकोप

टीपः– उपरोक्त सभी किस्में खरीफ मध्य बुवाई के लिए उपयुक्त।

सबरी कुल्थी (बीएसपी 17–3)

इंदिरा कुल्थी (आईकेजीएच–1

छत्तीसगढ़ कुल्थी–3 (बीएचजी–3)

अलख कुल्थी (बीएसपी 17–1)

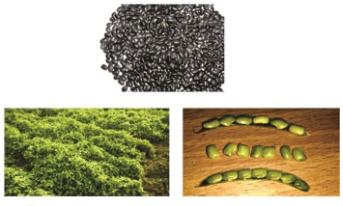
बिलासा कुल्थी (बीएसपी 15–1)

छत्तीसगढ़ कुल्थी–2 (बीडब्ल्यूएच–1)

बोने की विधि : कुल्थी को छिटकवॉ तथा कतार विधि से बोया जाता है। अधिक उपज के लिए हल के पीछे पंक्तियों में बुवाई करना उपयुक्त रहता है। खरीफ फसल के लिए पंक्तियों के मध्य की दूरी 30 से.मी. रखी जाती है। बीजों की आपसी दूरी 8–10 से.मी. रखते हुए 4 से.मी. गहराई पर बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : अच्छी उपज लेने के लिए खेत की अंतिम जुताई के समय पूर्णतः सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट, पॉच टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह मिलाये। इसके बाद बीज की बुवाई के समय 20 किलो नत्रजन, 40–50 किला स्फूर, 20–25 किलो पोटाश तथा 20 किलो सल्फर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से कूँडों में 5–7 से.मी. गहराई पर बीज के बगल में डालना चाहिए। अनुसंधानों के निष्कर्ष में पाया गया है कि कुल्थी की उचित बढ़वार एवं विपुल उत्पादन हेतु 1 प्रतिशत एन.पी.के. 19:19:19 का पर्णीय छिड़काव दो बार (प्रथम फुल आने के पहले तथा द्वितीय फलीयाँ बनने पर) करना चाहिए। उर्वरकों की सही मात्रा का निर्धारण मृदा परीक्षण आधार पर करना चाहिए।

खरतवार नियंत्रण : खरपतवार प्रकोप से कुल्थी की उपज घट जाती है। कुल्थी बुवाई से 45–60 दिन तक खेत खरपतवार मुक्त रहना आवश्यक है। बुवाई के 25–30 दिन बाद एक निंदाई गुडाई करने से उपज में वृद्धि होती है।

कुल्थी में रासायनिक खरपतवार प्रबंधन:

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	इमेजाथापायर 10: एस. एल	30	300	खरपतवार की 2–3 पत्ती की अवस्था में	ये संकरी पत्ती वाले सांवा एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5: ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई.सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास : वर्षाकालीन फसल में प्राय: सिंचाई की आवश्यकता नही पड़ती है परन्तु अधिक वर्षा की स्थिति में खेत में भरे जल का निकास नितांत आवश्यक है। सूखे की स्थिति में फल्लियॉ बनते समय एक सिंचाई देना लाभकारी पाया गया है। कुल्थी को अपने जीवन काल में 15–30 से.मी. जल की आवश्यकता होती है।

पौध संरक्षण :

रोग व्याधि प्रबंधन : चूर्णिल आसिता या भभूतिया (पाऊडरी मिल्ड्यू) :

यह कवक जनित रोग कुल्थी उगाये जाने वाले सभी क्षेत्रों में पाया जाता है। सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद रंग के छोटे–छोटे चकते बनते है जो बाद में बड़े होकर एक–दूसरे से मिल जाते हैं व पूरी पत्ती को ढंक लेते हैं। पत्तियों व पौधे के अन्य हरे भागों पर सफेद चूर्ण जमा हो जाता है। रोग की उग्र अवस्था में संक्रमित पौधे की पत्तिया पूर्णत: सूख जाती है, फलस्वरूप फल्लियाँ कम बनती हैं तथा बनी हुई फल्लियों में दाने छोटे तथा सिकुड़े हुए बनते है। इस रोग को रोगजनक इरीसाइफी पीसी/पालीगोनी फफूँद है।

प्रबंधन : खेत में पड़े रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को कटाई उपरान्त एकत्र कर जला देना चाहिए। बुवाई के लिए बीजों का चयन रोगमुक्त क्षेत्र की फसल से करना चाहिए तथा सदैव प्रमाणित बीजों की ही बुवाई करनी चाहिए। जल्दी पकने वाली किस्मों तथा अपेक्षाकृत जल्दी बोई गई फसल पर इस रोग का संक्रमण कम होता है। खेत में रोगग्रस्त फसल पर गंधक चूर्ण (200 मेश) 25–30 कि.ग्रा./हेक्टेयर का भुरकाव करना चाहिए। छिड़काव हेतु घुलनशील गंधक (3 ग्राम) का उपयोग प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा 12–15 दिन के अंतराल पर दोहराना चाहिए। रोगरोधी/सहनशील किस्में उगाना चाहिए।

पीला चितकबरापन या मोजेक (यलो मोजेक):

यह रोग व्यापक रूप से लगभग सभी कुल्थी उगाने वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में इस रोग के प्राथमिक लक्षण सबसे ऊपरी पत्ती पर पीले हरे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। अंकुरण के 5–6 सप्ताह बाद द्वितीयक संक्रमण से ग्रसित पौधे दिखाई देते हैं। पत्तियों पर अनियमित आकार के हल्के पीले रंग के चकते दिखाई देते हैं जो एक साथ मिलकर तेजी से फैलते हैं जिससे पत्तियों पर पीले धब्बे हरे धब्बों के अगल–बगल दिखाई देते हैं। संक्रमित पत्तियाँ धीरे–धीरे पीली होकर अन्त में ऊतकक्षयी हो जाती हैं। यह रोग एक विषाणु जनित रोग है जिसका वाहक सफेद मक्खी (बेमेसिया टेबेसाई) है।

प्रबंधन : जहां तक संभव हो, खेत के चारों तरफ तथा खेत की साफ–सफाई रखना चाहिए, जिससे रोगजनक विषाणु के अन्य परपोषी न पनप पायें। जब रोग के प्रारंभिक लक्षण छोटे पौधों पर दिखाई दे तब उन्हें उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। पौधों को सफेद मक्खी के आक्रमण से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मि.ली./ली.) कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए। रोग प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों को उगाना चाहिए।

कीट प्रबंधन : कीट प्रबंधन की प्रचलित तकनीक

रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रित करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. **फसल चक्र एवं किस्म चयन**: उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।
2. **फसल प्रबंधन**: भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।
3. **निगरानी**: फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।
4. **मित्र जीव संवर्धन**: कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।

5. रासायनिक कीट नियंत्रणः दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

हानिकारक कीटों की पहचान: चित्तीदार फली भेदक कीटः इस कीट की इल्लियां पत्ती, कलिका एवं फलियों को जाले से बांधकर तथा उसके अंदर रहकर नुकसान पहुंचाती है। इसे नष्ट करने के लिए क्लोरट्रानिप्रोल 18.50 प्रतिशत एस.सी. 100 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

चने की इल्लीः इल्लियां हरे से भूरे रंग की एवं शरीर के किनारों पर हल्की या गहरी लहरदार धारियां पायी जाती है। इसकी इल्लियां प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है तथा बाद की अवस्था में फल्ली में गोलाकार छेद बनाकर अपना सिर फली में घुसाकर दाने को खाती है। इसे नष्ट करने के लिए फेनवलरेट 20 प्रतिशत ई.सी. 500 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

थ्रिप्सः इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु पत्तियों एवं फल्लियों से रस चूसते है जिससे क्षतिग्रस्त भाग पर सफेद धारियां पड़ जाती है।

समन्वित कीट प्रबंधन : ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें तथा फसल के अवशेष नष्ट करें। समय पर बुवाई करें। इससे कीटों से क्षति कम होती है। प्रकाश प्रपंच (1–2 प्रति हेक्टेयर) एवं फेरोमोन प्रपंच (12–15 प्रति हेक्टेयर) का उपयोग करें। ग्वारफली एवं अरण्डी को ट्रैप फसल के रूप में लगाएं। कीड़ों को फसल पर अण्डा देने से रोकने के लिए फसल की कली अवस्था में एन.एस.के.ई. 5 का छिड़काव करें।

रासायनिक नियंत्रणः फसल की फूलों वाली अवस्था में 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़ाकाव करें–

प्रोफेनाफास 50 ई.सी. 1.5 ली./हेक्टेयर या इण्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर या फ्लूबेनडायमाइड 480 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर।

थ्रिप्स एवं फल्ली भेदक कीटों के एक साथ प्रकोप होने पर-

इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की मात्रा 250 मि.ली./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं गहाई : कुल्थी की फसल की कटाई के समय विशेष सावधानी रखनी पड़ती है। पौधे की ऊपर की फल्लियाँ जब पीली पड़ने लगे तब कटाई कर लेनी चाहिए क्योंकि इस समय पौधे के निचले एवं मध्य भाग में लगी फल्लियॉ पक जाती है। कटाई में देरी करने से नीचे की फल्लियॉ चटकने का भय होता है जिससे उत्पादन में कमी आ जाती है। कटाई के उपरान्त पौधों को खुली घूप में सुखाकर गहाई करनी चाहिए।

उपज एवं भण्डारणः वर्षाकालीन फसल में दानों की उपज 8–10 क्विं./हे. तक प्राप्त हो जाता है। हरे चारे वाली जातियों से 200–250 क्विं./हे. तक हरा चारा प्राप्त हो जाता है। दानो में जब 9–11 प्रतिशत नमी रह जाये तब सूखे व स्वच्छ स्थान पर दानो का भण्डारण करना चाहिए।

कुल्थी के उत्पादन के मंत्र : खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्में जैसे इंदिरा कुल्थी–1, छ.ग. कुल्थी–2, छ.ग. कुल्थी–3, बिलासा कुल्थी आदि का उपयोग करना चाहिए। हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें। सही समय में कटाई करना चाहिए। भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए।

आर्थिक विश्लेषण : उन्नत विधि को अपनाकर कुल्थी की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 20000–25000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ रू. 30000–35000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। कुल्थी की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

--xx--

लोबिया

वानस्पतिक नाम	-	**विग्ना अनगुइकुलाटा**	**कुल**	-	**लेग्यूमिनोसी**
उपकुल	-	**पैपिलिओनेसी**	**क्रोमोसोम नं.**	-	**22**
स्थानीय नाम	-	**बरबट्टी**			

उत्पत्ति एवं वितरण : मध्य आफ्रीका में लोबिया की सभी जातियॉ जंगली रूप में पाई जाती है। अत: मध्य अफ्रीका को इसका जन्म स्थान मानते है। लोबिया की खेती भारत में दाने, हरी सब्जी, हरे चारे और हरी खाद के लिए की जाती है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तप्रदेश व छत्तीसगढ़ में लोबिया के दानों (साबुत) को दाल व पूरी, फलियों को सब्जी बनाने के काम में लाते है। इसके दानों में मिथियोनिन नामक अमीनो अम्ल की मात्रा अन्य दलहनों से अधिक होता है। कुल प्रोटीन का 1.9 प्रतिशत मिथियोनिन होता है। दानों में प्रोटीन 23.4 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 60.3 प्रतिशत व वसा 1.8 प्रतिशत होता है।

संक्षिप्त कृषि कार्यमाला :

जलवायु : लोबिया ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में उगाई जाने वाली फसल है। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए सिंचाई आवश्यक होती है। लोबिया के बीज 14° सेलसियस–15° सेल्सियस के नीचे तापक्रम हो जाने पर अच्छी प्रकार से अंकुरित नहीं हो पाता है। फसल पर 40° सेल्सियस उच्च तापक्रम तक भी कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है। पाले व कम तापक्रम का वृद्धि पर कुप्रभाव पडता है।

भूमि का चयन :

मृदा : **भूमि की तैयारी** : साधारणतया दो से तीन जुताई देशी हल या हैरो से करके पाटा लगा कर खेत तैयार कर लिया जाता है। यदि पूर्ववर्ती फसल के ठूंठ या खरपतवार खेत में अधिक हो तो सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए।

बुवाई का समय : वर्षा ऋतु की फसल को मध्य जुलाई से अगस्त के दूसरे सप्ताह तक बोना चाहिए। बसंतकालीन फसल फरवरी के द्वितीय पखवाड़े या मार्च में बोना चाहिए। ग्रीष्म में लोबिया की बुवाई फरवरी – मार्च में की जा सकती है।

बीज की मात्रा : फसल के लिए खरीफ में लगभग 15–20 कि.ग्रा. तथा ग्रीष्म ऋतु में 25–30 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है।

बीजोपचार :

(अ) रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार : बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 2.5 से 3.0 ग्राम कार्बेडाजिम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

(ब) राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार : एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर + 50 ग्राम गुड़ + आधा लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर 10 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर छायादार स्थान में रखे तत्पश्चात् बुवाई करें। ध्यान रहे कि राजोबियम से उपचारित करने के बाद बीज को कवकनाशी/कीटनाशी

से उपचारित न करें।(स) पी.एस.बी., के.एस.बी., जेड.एस.बी. व ट्राइकोडर्मा कल्चर से बीजोपचार :

बीजोपचार हेतु 5 ग्राम कल्चर प्रति कि.ग्रा. बीज हेतु पर्याप्त होती है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही उपरोक्त कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

अनुशंसित किस्में : दाने तथा हरी सब्जी (फल्लियों) के लिए उगायी जाने वाली प्रमुख उन्नत किस्मों का विवरण निचे दिया गया है ।

क्र.	किस्म	निजात वर्ष	संस्था का नाम	अवधि (दिन)	औसत उपज (क्विं./हे.)	प्रमुख गुण
1	जीसी 1601 (गुजरात काऊपी 8)	2023	एसडीएयू, एस. के. नगर	70–75	11–12	पीला मोजेक मध्यम प्रतिरोधी
2	पंत लोबिया – 3	2016	जीबीपीयूए–टी, पंतनगर	65–70	14–18	पीला मोजेक प्रतिरोधी
3	पंत लोबिया – 4	2015	जीबीपीयूए–टी, पंतनगर	60–65	14–18	जीवाणु जनित एवं यलो मोजेक रोग के प्रति सहनशील
4	खल्लेश्वरी	2007	इं.गां.कृ.वि.वि., रायपुर	90	4 क्विं./हे.	फल्ली भेदक सहनशील, भभुतिया रोग निरोधक
5	पूसा दो फसली			70–80	12–15	खरीफ व ग्रीष्म ;तु हेतु उपयुक्त फलियॉ हल्के रंग की लंबी
6	पूसा ऋतुराज			80–85	80–85 क्विं./हे (हरी फलियॉ) 10–12 क्विं.हे. (दानो का उपज)	खरीफ व ग्रीष्म ;तु हेतु उपयुक्त फलियॉ 20 से.मी. लंबी तथा पतली प्रति पौधा सर्वाधिक फलियां
7	पूसा फाल्गुनी			60–70	10–12 क्विं./हे. (दानों का उपज)	पौधे छोटे, झाडीनुमा
8	पूसा बरसाती			110–120	12–15 क्विं./हे. (दानों का उपज)	खरीफ हेतु उपयुक्त फलियॉ लंबी सफेद रंग की

खल्लेश्वरी

बोने की विधि : कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 8–10 से.मी. रखना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन : अच्छी उपज लेने के लिए संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक रहता है। खेत की अंतिम जुताई के समय पूर्णतः सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट, पॉच टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह मिलाये। इसके बाद बीज की बुवाई के समय 20 किलो नत्रजन, 40–50 किला स्फूर, 20–25 किलो पोटाश तथा 20 किलो सल्फर प्रति हेक्टेयर के हिसाब से कूँडों में 5–7 से.मी. गहराई पर बीज के बगल में डालना चाहिए। अनुसंधानों के निष्कर्ष में पाया गया है कि लोबिया की उचित बढ़वार एवं विपुल उत्पादन हेतु 1 प्रतिशत एन.पी.के. 19:19:19 का पर्णीय छिड़काव दो बार (प्रथम फुल आने के पहले तथा द्वितीय फलीयाँ बनने पर) करना चाहिए। उर्वरकों की सही मात्रा का निर्धारण मृदा परीक्षण आधार पर करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : प्रथम निंदाई, बोआई के 20–25 दिनों के अंदर तथा दूसरी निंदाई आवश्यकतानुसार फूल–फल की अवस्था में करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार प्रबंधन हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों का प्रयोग कर खरपतवार प्रबंधन करना चाहिए। खरपतवारनाशियों का खेत में छिड़काव करने हेतु हमेशा फ्लैट फैन नोजल युक्त पम्प से 500–600 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से घोल बनाकर प्रयोग करना उचित रहता है।

लोबिया में रासायनिक खरपतवार प्रबंधनः

क्र.	खरपतवारनाशी का तकनीकी नाम	प्रति एकड़ मात्रा (मि.ली./ग्राम)		डालने का समय	नियंत्रित होने वाले खरपतवार
		सक्रिय तत्व	व्यावसायिक उत्पाद		
1	इमेजाथापायर 10ः एस.एल	30	300	खरपतवार की 2–3 पत्ती की अवस्था में	ये संकरी पत्ती वाले सांवा एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
2	क्यूजेलोफोप इथाइल 5ः ई.सी.	16–20	320–400	बोनी के 15 दिन के बाद किन्तु 20 दिन के अंदर	ये संकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
3	पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी.	400	1320	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
4	पेंडीमेथिलीन 38.7 ई.सी.	300	700	बोनी के 0–3 दिन के अंदर	ये संकरी एवं चौड़ी पत्ती वाले समस्त खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

सिंचाई एवं जल निकास : मृदा में उपलब्ध नमी 50 प्रतिशत रहने पर सिंचाई करनी आवश्यक होती है। बसंतकालीन (ग्रीष्मकालीन) फसल में 10–15 दिन के अंतराल 4–5 सिंचाई की जाती है। वर्षाकालीन फसल में जल निकास का उचित प्रबंध होना अत्यंत आवश्यक है। खेत में पानी का कुछ समय भी रूकना फसल के लिए अत्यंत हानिकारक है।

फसल चक्र व मिश्रित खेती

लेबिया के एक वर्षीय सघन फसल चक्र निम्न प्रकार है ।

1. लोबिया –ज्वार –गेहूँ, 2. लोबिया –बाजारा–गेहूँ, 3. लोबिया +मक्का–गेहूँ , 4. लोबिया +ज्वार –गेहूँ, 5. लोबिया + बाजरा –गेहूँ, 6. लोबिया + मक्का –गेहूँ, 7. लोबिया –धान–गेहूँ, 8. लोबिया –गन्ना

पौध संरक्षण :

रोग व्याधि प्रबंधन :

चूर्णिल आसिता या भभूतिया (पाऊडरी मिल्ड्यू): सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद रंग के छोटे–छोटे चकते बनते है जो बाद में बड़े होकर एक–दूसरे से मिल जाते हैं व पूरी पत्ती को ढंक लेते हैं। पत्तियों व पौधे के अन्य हरे भागों पर सफेद चूर्ण जमा हो जाता है। रोग की उग्र अवस्था में संक्रमित पौधे की पत्तिया पूर्णत: सूख जाती है, फलस्वरूप फल्लियाँ कम बनती हैं तथा बनी हुई फल्लियों में दाने छोटे तथा सिकुड़े हुए बनते है। इस रोग को रोगजनक इरीसाइफी पीसी/पालीगोनी फफूँद है।

प्रबंधन : खेत में पड़े रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को कटाई उपरान्त एकत्र कर जला देना चाहिए। बुवाई के लिए बीजों का चयन रोगमुक्त क्षेत्र की फसल से करना चाहिए तथा सदैव प्रमाणित बीजों की ही बुवाई करनी चाहिए। जल्दी पकने वाली किस्मों तथा अपेक्षाकृत जल्दी बोई गई फसल पर इस रोग का संक्रमण कम होता है। खेत में रोगग्रस्त फसल पर गंधक चूर्ण (200 मेश) 25–30 कि.ग्रा./हेक्टेयर का भुरकाव करना चाहिए। छिड़काव हेतु घुलनशील गंधक (3 ग्राम) का उपयोग प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा 12–15 दिन के अंतराल पर दोहराना चाहिए। रोगरोधी/सहनशील किस्में उगाना चाहिए।

पीला चितकबरापन या मोजेक (यलो मोजेक) : फसल की प्रारंभिक अवस्था में इस रोग के प्राथमिक लक्षण सबसे ऊपरी पत्ती पर पीले हरे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। पत्तियों पर अनियमित आकार के हल्के पीले रंग के चकते दिखाई देते हैं जो एक साथ मिलकर तेजी से फैलते हैं जिससे पत्तियों पर पीले धब्बे हरे धब्बों के अगल–बगल दिखाई देते हैं। संक्रमित पत्तियाँ धीरे–धीरे पीली होकर अन्त में ऊतकक्षयी हो जाती हैं। रोगग्रस्त पौधे खेत में दूर से ही पहचाने जा सकते हैं।

यह रोग एक विषाणु जनित रोग है जिसका वाहक सफेद मक्खी (बेमेसिया टेबेसाई) है।

प्रबंधन : जहां तक संभव हो, खेत के चारों तरफ तथा खेत की साफ–सफाई रखना चाहिए, जिससे रोगजनक विषाणु के अन्य परपोषी न पनप पायें। जब रोग के प्रारंभिक लक्षण छोटे पौधों पर दिखाई दे तब उन्हें उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। पौधों को सफेद मक्खी के आक्रमण से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.5 मि.ली./ली.) कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए। रोग प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों को उगाना चाहिए।

कीट प्रबंधन : **कीट प्रबंधन की प्रचलित तकनीक** रासायनिक कीटनाशकों के निष्प्रभावी होने की प्रक्रिया के प्रमुख घटकों में कीटनाशकों का स्तरहीन होना, सही उपयोग विधि का न अपनाया जाना एवं निर्धारित मात्रा

एवं सांद्रता संबंधी निर्देशों का पालन नहीं करना प्रमुख है। पीड़क कीटों के नियंत्रण हेतु विभिन्न विधियों को मिश्रित करना लाभदायक है जैसे एक उपयुक्त रासायनिक कीटनाशक के साथ में हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, फिरोमोन प्रपंच, प्रतिरोधक/सहनशील किस्म तथा सस्य विज्ञानी क्रियाओं को मिश्रित करना सुरक्षित, सस्ता एवं टिकाऊ रास्ता है। अनियंत्रित कीटनाशक उपयोग से ऊपजी समस्या के निदान के लिए समन्वित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. **फसल चक्र एवं किस्म चयन**: उचित फसल चक्र अपनाये एवं सिफारिस की गई किस्मों को ही अपने खेत में लगाए।

2. **फसल प्रबंधन**: भूमि के प्रकार एवं किस्मों की अवधि के अनुसार नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश उर्वरकों को उचित अनुपात में देवें। खेत के अंदर एवं आसपास उग रहे खरपतवारों का उन्मूलन आवश्यक है।

3. **निगरानी**: फसल में हानिकारक कीटों की उपस्थिति एवं संख्या पर निगरानी हेतु प्रकाश प्रपंच सायं 6.30 बजे से रात्रि 10.30 बजे तक चालू रखें या फेरोमोन प्रपंच लगायें तथा हस्तजाल चलाकर हानिकारक व लाभदायक कीटों की संख्या पर नजर रखें। निगरानी करने के साथ–साथ अण्ड समूहों व इल्लियों को एकत्र कर लेवें।

4. **मित्र जीव संवर्धन**: कीटाहारी जीवों की सक्रियता बढ़ाने के लिए फूलदार पौधे लगाए। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की उपस्थिति बनाये रखने हेतु आर्थिक क्षति बिन्दु (ई.टी.एल.) का ध्यान रखे पोषक कीटों की अनुपस्थिति में मित्र जीवों का पलायन हो सकता है।

5. **रासायनिक कीट नियंत्रण**: दवाओं का 500 लीटर पानी में घोल बनाकर शाम के समय में छिड़काव करना प्रभावकारी होता है। दवा की प्रभावशीलता बनाये रखने के लिए साबुन के घोल का उपयोग किया जा सकता है।

हानिकारक कीटों की पहचान : चित्तीदार फली भेदक कीट: इस कीट की इल्लियां पत्ती, कलिका एवं फलियों को जाले से बांधकर तथा उसके अंदर रहकर नुकसान पहुंचाती है। इसे नष्ट करने के लिए क्लोरट्रानिप्रोल 18.50 प्रतिशत एस.सी. 100 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

चने की इल्ली : इसकी इल्लियां प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है तथा बाद की अवस्था में फल्ली में गोलाकार छेद बनाकर अपना सिर फली में घुसाकर दाने को खाती है। इसे नष्ट करने के लिए फेनवलरेट 20 प्रतिशत ई.सी. 500 मि.ली./हेक्टेयर का उपयोग करें।

थ्रिप्स: इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु पत्तियों एवं फल्लियों से रस चूसते है जिससे क्षतिग्रस्त भाग पर सफेद धारियां पड़ जाती है।

समन्वित कीट प्रबंधन : ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें तथा फसल के अवशेष नष्ट करें। समय पर बुवाई करें। इससे कीटों क्षति कम होती है। प्रकाश प्रपंच (1–2 प्रति हेक्टेयर) एवं फेरोमोन प्रपंच (12–15 प्रति हेक्टेयर) का उपयोग करें। ग्वारफली एवं अरण्डी को ट्रैप फसल के रूप में लगाएं। कीड़ों को फसल पर

अण्डा देने से रोकने के लिए फसल की कली अवस्था में एन.एस.के.ई. 5 का छिड़काव करें।

रासायनिक नियंत्रण: फसल की फूलों वाली अवस्था में 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़ाकाव करें–

प्रोफेनोफास 50 ई.सी. 1.5 ली./हेक्टेयर या इण्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर या फ्लूबेनडायमाइड 480 एस.सी. 250 मि.ली./हेक्टेयर।

थ्रिप्स एवं फल्ली भेदक कीटों के एक साथ प्रकोप होने पर – इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की मात्रा 250 मि.ली./हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं गहाई : चारे व हरी खाद के लिए इसकी फसल 60–70 दिन में व दाने के लिए 90–110 दिन में पककर तैयार हो जाती है। फलियों को सब्जियों के रूप में प्रयोग करने के लिए उस समय तोड़ते है जबकि उनके अन्दर दाने पूर्ण रूप से भर जाऐं तथा दाने हरे ही रहें। दाने की फसल वर्षा ऋतु में 50 प्रतिशत फल्लियॉ पकते ही तोड़ लेनी चाहिए।

उपज एवं भण्डारण : बसंतकालीन फसल में दानों की उपज 10–15 क्विं./हे. व ग्रीष्मकालीन फसल से 15–20 क्विं./हे. तक प्राप्त हो जाता है। हरे चारे वाली जातियों से 200–250 क्विं./हे. तक हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

लोबिया के उत्पादन के मंत्र : खेत की तैयारी अच्छी तरह से करना चाहिए। शीघ्र पकने वाली किस्में जैसे खल्लेश्वरी, पूसा फाल्गूणी, पूसा दो फसली आदि का उपयोग करना चाहिए। हमेशा प्रमाणित बीज का ही उपयोग करें। सिफारिश की गई उर्वरकों की मात्रा का प्रयोग उचित समय पर करें एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन करें। छिड़काव के स्थान पर कतार बुवाई करना चाहिए। बीजोपचार अवश्य करना चाहिए। बुवाई समय पर करें। खेतों को खरपतवार से मुक्त रखना चाहिए। कीट व्याधि नियंत्रण अवश्य करें। सही समय में कटाई करना चाहिए। भण्डारण हेतु बीज को अच्छे से सुखाए ।

आर्थिक विश्लेषण : उन्नत विधि को अपनाकर लोबिया की खेती करने पर उत्पादन लागत रू. 20000–25000 प्रति हेक्टेयर एवं शुद्ध लाभ रू. 40000–45000 प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त किया जा सकता है। लोबिया की खेती से न सिर्फ अधिक आर्थिक लाभ होता है वरन इससे मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है साथ ही साथ फसल चक्र अपनाने से फसलों में कीट व्याधि का प्रकोप कम मात्रा में होता है।

--xx–

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)